चन्दामामा
जून १९८९

अनोखा उपहार!
रसना-प्रेमी बच्चों के लिए!
अनूठी भेंट!
रसना-प्रेमी माताओं के लिए!
Copyright © 1981 Marvel Comics Group.
मुफ़्त!
हर पैक में
उपहार!
TM
Rasna
What's the date?
1989
Refreshing
नया रसना
स्पाइडरमैन
पैक!
Rasna
ताज़गीभरा रसना
11 प्यारे स्वाद, प्यारे दाम में.
Mudra:A:EAMR:4570 Hin

चन्दामामा

जून 1989

विषय-सूची

एक प्रति : ३-००

वार्षिक चन्दा : ३६-००

TRAVEL INDIA
Fun is
चाइनीज़ पज़ल
ट्रैवल इंडिया गेम
'फ़न इज़' पोस्टर सेट
MAGGI
क्लब
1989 की मौज-बहार!
नए-नए उपहार!

अपने शिशु को दीजिए सैरेलॅक का अनूठा लाभ

कीजिए ठोस आहार की आदर्श शुरूआत

6 महीने से

4 महीने से

6 महीने से

४ महीने की उम्र से आपके शिशु को दूध के साथ-साथ ठोस आहार की भी ज़रूरत होती है. उसे सैरेलॅक का अनूठा लाभ दीजिए.

पौष्टिकता का लाभ : सैरेलॅक का प्रत्येक आहार आपके शिशु की आवश्यकता के अनुसार सारे पौष्टिक तत्व प्रदान करता है — प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फैट, विटामिन तथा मिनरल. सभी पूरी तरह संतुलित.

स्वाद का लाभ : शिशुओं को सैरेलॅक का स्वाद बहुत भाता है.

समय का लाभ : सैरेलॅक पहले से ही पकाया हुआ है और इसमें दूध और चीनी मौजूद है. केवल इसे उबाले हुए गुनगुने पानी में मिला दीजिए.

पसंद का लाभ : तीन तरह के सैरेलॅक में से आप अपनी पसंद का चुन सकती हैं.

कृपया डिब्बे पर दिए गए निर्देशों का सावधानी से पालन कीजिए ताकि इसके बनाने में स्वच्छता रहे और आपके शिशु को संतुलित पोषाहार मिले.

मुफ़्त ! सैरेलॅक बेबी केयर बुक
लिखिये : सैरेलॅक, पोस्ट बॉक्स नं. 3
नई दिल्ली-110 008

सैरेलॅक का वादा : स्वाद भरा संपूर्ण पोषाहार

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

मनुष्य सहज रूप में अपनी समस्याओं पर तर्कसंगत विचार करते हैं, उनका कारण ढूंढ़कर समस्या हल करने की कोशिश करते हैं। मगर कुछ लोग, जो केवल श्रद्धा एवम् अंधविश्वासों का आधार लेते हैं, उनसे स्वार्थी लोग कैसे नाजायज़ फायदा उठाते हैं, इसका उत्तम उदाहरण 'रापाश' कहानी है।

अमरवाणी

दूरेपि परस्यागसि, पटुर्जनो नात्मनः समीपेपि ।
स्वं व्रणमक्षि न पश्यन्ति, शशिनि कलंकं निरूपयति ।।

[कुछ लोग अपने भीतर के दोषों को छिपाकर, दूरस्थ, अन्य लोगों की तृटियों को दर्शाने में अत्यन्त कुशल होते हैं। जैसे आँखें अपने अन्दर के श्यामवर्ण को नहीं देख पातीं, पर आकाश में स्थित चन्द्रमा के धब्बे देख पाती हैं।]

वर्ष : ४१ जून १९८९ अंक : १०

एक प्रति : ३-०० :: वार्षिक चन्दा : ३६-००

पिंकी लाइए...

और
अपनी लिखावट
मोतियों सी
बनाइए...

PINKY

लायन
पिंकी

शहर की
सबसे खूबसूरत पेंसिल.

अब लायन पेंसिल्स की ओर से एक और नयी पेशकश... पर्ल फ़िनिश युक्त **लायन पिंकी** पेंसिल. आकर्षक पेंसिल. देखने में खूबसूरत. इसकी एच बी लैड की मज़बूत बनावट के कारण यह सहजता से लिखे, और न ही बार-बार टूटे.

रबर टिप और हेक्ज़ागॉनल के साथ भी उपलब्ध

लायन पेंसिल के अन्य जाने-माने ब्राण्ड :

लायन **मोटो**, लायन **टरबो**, लायन **स्वीटी**, लायन **कॉन्कॉर्ड**, लायन हाय-टैक **मैटालिक**, लायन **मशहूर**, लायन **एक्ज़ेक्यूटिव**, लायन **नॉवेल्टी**, लायन **जीमैटिक** ड्राइंग पेंसिलें. और **रतन** कलर पेंसिलें तथा वैक्स क्रेयॉन.

लायन पेंसिल्स प्रा. लि., ९५ पारिजात, मरीन ड्राइव, बम्बई ४०० ००२.

क्रोध अस्वास्थ्य का कारण है ।

हृदयरोग के सम्बन्ध में ड्यूक विश्वविद्यालय में अनुसन्धान कार्य किया गया । इस शोध-कार्य से यह बात स्पष्ट हुई, कि दूसरों से प्रतिशोध लेनेवालों, सदा दूसरों का अपमान करनेवालों, क्रोधी स्वभाववालों में हृदयरोगी अधिक होते हैं, और ऐसे लोग अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते हैं । इसलिये हृदय को स्वस्थ रखना है तो शान्तप्रकृति बनाये रखना आवश्यक है ।

एफेल टॉवर की शताब्दि

एफेल टॉवर के संचालकों ने यह घोषित किया है कि, वे दिसंबर ३१ से सारे विश्व में प्रसिद्धि प्राप्त ऊँची इमारतों पर नये ढंग से दीप अलंकृत करके उन सब के मुकुटमणि पॅरिस-स्थित एफेल टॉवर की शतसंवत्सरी मनाएँगे । न्यूयॉर्क की एम्पायर स्टेट बिल्डिंग, टोकियो टॉवर, कनाडा के टोरंटो, कालगरी टॉवर्स, लन्दन में स्थित ब्रिटिश टेलकम टॉवर, पश्चिम जर्मनी के म्युनिच में स्थित ऑलिम्पिक टॉवर इत्यादि। ३२० फूट ऊँचे इस एफेल टॉवर का निर्माण १८८९ में गस्टॉव एफेल ने करवाया था ।

लघुविमान

सोवियत रूस के वैज्ञानिक व्हिक्टर दिमिद्रीव ने एक लघु विमान को रूपायित किया है, जो प्रति घंटा १३० कि.मी. की गति से उड़ सकता है और उसका वजन ४७ कि. ग्रॅम है । इस लघु विमान को प्रति घंटे ३ लिटर पेट्रोल की आवश्यकता होगी ।

चिता से जीवित निकल आयी वृद्ध नारी ।

मलंकी गाँव, जिला भावनगर में सौ साल की एक बूढ़ी को मृत समझकर चिता पर लिटाया गया । मगर थोड़ी देर बाद उसने चिता से उठ खड़ी होकर अपने रिश्तेदारों व मित्र-परिवार को आश्चर्य में डाल दिया । उसे खड़ी होते देख पहले तो सब लोग घबरा गये, मगर वे समझ गये कि वृद्धा बेहोशी की हालत में थी, उसे मृत समझकर चिता पर लिटाया गया था । अब उस स्मरण से भी उन सबको हँसी आती है ।

मुखिये की मूर्खता

घराने की परम्परा के अनुसार वृषभेन्द्र गाँव का मुखिया तो बना, लेकिन था वह निरा बुद्धू ! एक बार एक किसान ने उससे शिकायत की, "महाशय, मेरे खेतों की फ़सल एक भैंसा चर रहा है । किसी उपाय से उसे वहाँ से बाहर भगा दीजिये न !"

"मैं नौकर को भेजकर उसे भगवा दूँगा । " वृषभेन्द्र ने कहा ।

"तब तक तो शायद वह सारी फसल कुचल डालेगा । " किसान ने फिर कहा ।

"तब तो उस को खेत के बीच से निकालने के लिये दो आदमियों का इंतज़ाम कर देता हूँ । " ग्रामाधिकारी के इस कथन के खीझकर बेचारा किसान वहाँसे चला गया ।

एक बार ग्रामवासियों ने उसका मज़ाक उड़ाने के लिये उससे कहा, "महाशय, गाँव के सभी लोगों का यह विचार है, कि शिवालय को एक गज़ पीछे हटाया जाय तो उत्तम होगा । "

"अरे यह कौन बड़ी बात है !" कहकर वृषभेन्द्र ने सौ लोगों को बुलाया और उनको मन्दिर पीछे हटवाने के लिये आदेश देकर निशाने के लिये अपनी पगड़ी मंदिर के पीछे एक गज़ की दूरी पर रखी ।

लोगों ने मन्दिर हटाने का नाटक किया और उसे कहा, "महाशय, आप पीछे जाकर देख कर तो आइये, मंदिर पीछे हट गया है नहीं !"

ग्रामाधिकारी मन्दिर के पीछे गया तो वहाँ पगड़ी थी ही नहीं । कोई उसे चुराकर ले गया था । मगर अधिकारी दौड़कर फिर लोगों के पास आया और कहने लगा, "अरे, तुम लोगों ने मंदिर एक गज से अधिक पीछे ढकेला है, और मेरी पगड़ी उस के नीचे दब गयी है । "
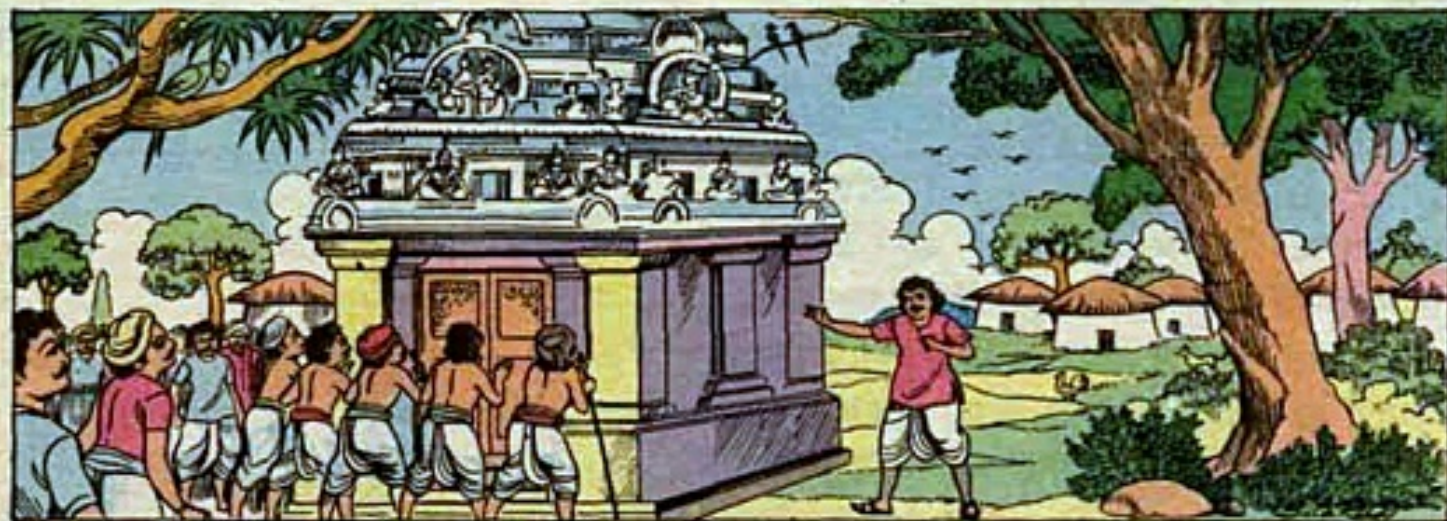
बिना उबला प्याज

विश्वनाथपुर में रामधन और गणेशदत्त नामक दो भाई रहा करते थे । अपने मकान को दो हिस्सों में बाँट कर वे अलग अलग अपनी गृहस्थी चलाते थे । उन दोनों में रामधन ज़रा भोला था और गणेशदत्त खासा चतुर था ।

एक दिन एक बैरागी उनके घर आया और उसने खाना खिलाने को कहा । गणेशदत्त ने बैरागी को डाँट कर भगा दिया; लेकिन रामधन ने बड़े आदर से बैरागी का स्वागत किया और बड़े प्यार से उसने उसे खाना खिलाया । प्रसन्न होकर बैरागी ने पूछा, "बताओ, तुम्हारे मन में कोई इच्छा है ? मैं उसे पूरी करूँगा । बिना संकोच के बताओ । मुझ में वह शक्ति है कि तुम्हारी किसी भी इच्छा की पूर्ति मैं कर सकता हूँ । यह सिद्धि मुझे अपने गुरु से प्राप्त हुई है । "

"मेरा छोटा भाई गणेशदत्त मुझसे ज़्यादा संपन्न और सुखी है । मैं भी वही चाहता हूँ । " रामधन ने अपनी इच्छा कह दी ।

"अच्छा, तुम्हारे घर में कोई तरकारी हो, तो लेते आओ । " बैरागी ने कहा ।

रामधन ने सारा घर छान डाला । उसे सिर्फ़ चार प्याज़ मिले । रामधन को बैरागी ने समझाया, "ये चारों प्याज़ पानी में डालकर उबालो । जो पक जायेंगे, उन्हें खा लो और जो नहीं पकेंगे, उन्हें वहीं छोड़ कर मेरे पास चले आओ । "

बैरागी के कहे अनुसार रामधन ने वे प्याज़ उबाले । एक प्याज़ छोड़कर बाकी के पक गये । रामधन ने पके प्याज़ खा डाले और बिना पका प्याज़ वहीं कहीं छोड़ कर वह बैरागी के पास पहुँचा ।

विवरण सुनकर बैरागी ने कहा, "तुम बहुत ही भाग्यशाली हो । मैं आज की रात यहीं सो जाऊँगा । वह बिना उबला प्याज़ हिफ़ाज़त से

"वसुन्धरा"

रख देना । उसे इधर-उधर कहीं खोना नहीं । वह तुम्हारे पासवाली बहुत महत्त्वपूर्ण वस्तु समझो । सबेरा होनेपर वह न उबला हुआ प्याज़ तुम्हारी इच्छाएँ पूरी करने लगेगा । ''

रामधन ने बैरागी के सोने का उचित प्रबंध किया । रात को जब वे दोनों गहरी नीन्द सो रहे थे, तब गणेशदत्त ने भाई के घर में प्रवेश किया । दरअसल बात यह थी, कि रामधन ने बैरागी को जब खाने के लिये आमन्त्रित किया, तब से आड़ में रहकर वह उनकी बातें सुन रहा था । बिना उबले प्याज़ के द्वारा रामधन का कोई लाभ न हो, इस दुष्ट विचार से उसने वह प्याज़ झट से निगल डाला और फिर चुपके से अपने घर जाकर इत्मीनान से सो गया ।

सबेरे उठकर रामधन ने देखा - वह न उबला हुआ प्याज़ गायब है ? वह इस दुर्भाग्य पर अपना सिर पीटने लगा ।

इसपर बैरागी ने रामधन को सान्त्वना देते हुए कहा, "तुम घबराओ मत । जो कुछ हुआ, तुम्हारी भलाई के लिये ही हुआ है । केवल प्याज़ तुम्हारी इच्छाएँ कैसे पूरी कर सकेगा ? मेरी मन्त्रशक्ति के प्रभाव में आकर किसीने उसे निगल डाला है । वह प्याज़ जो गरम पानी में भी नहीं उबला था, शरीर के भीतर भी वह हज़म नहीं हो सकता । तुम्हें अब, जब किसी चीज़ की ज़रूरत हो, तब तुम ज़ोर से कह दो, "बिना उबला प्याज़, मुझे अमुक चीज़ चाहिये । फिर क्या ! जिसने वह प्याज़ निगला हो, वह व्यक्ति तत्काल तुम्हारे सामने हाज़िर होकर तुम्हारी इच्छा-पूर्ति करेगा । लेकिन देखो, तुम्हें लालच में नहीं पड़ना चाहिए और न तुम्हें ऐसी इच्छा प्रकट करनी चाहिए, जो कि इच्छा-पूर्ति करने वाले के सामर्थ्य के बाहर की हो । मैं पुनः छः महीने बाद यहाँ लौट आऊँगा । उस वक्त मैं तुम्हें प्रसन्न देखना चाहता हूँ । ''

रामधन ने बैरागी के चरणों में झुककर प्रणाम किया और बैरागी ने उससे बिदा ली । उसके चले जाने पर रामधन ने ज़ोर से कहा, "बिना उबले प्याज़ ! मुझे रेशमी, मुलायम गद्दों वाली खाट चाहिये ! "

बस ! दूसरे ही मिनट में गणेशदत्त वहाँ आ पहुँचा और रेशमी बिस्तरोंवाली खाट का प्रबन्ध करके चला गया ।

रामधन को जब मालूम हुआ कि उसके भाई ने ही वह प्याज़ खाया है; तब उसकी प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा । गणेशदत्त ने इसके पूर्व रामधन को धोखा दिया था और पैतृक संपत्ति का अधिकांश हिस्सा हड़प लिया था । उस समय गणेशदत्त ने यह रेशमी गद्देवाली चारपाई बहुत कम दाम बोलकर अपने कब्जे में की थी ।

"बिना उबले प्याज़ ! मुझे एक सौ सिक्के चाहिये । '' रामधन ने कहा ।

चमत्कार की बात थी - थोड़ी देर में आकर गणेशदत्त उसे सौ सिक्के देकर चला गया । थोड़े ही दिन पहले रामधन ने गणेशदत्त के पास सौ सिक्के सौंप रखे थे, पर उसे झूठ बोलकर वापस करने से इन्कार कर दिया था ।

रामधन के दिन अब आराम से कटने लगे । गणेशदत्त प्रतिदिन उसके खाने-पीने का इन्तज़ाम करता, घर की सफ़ाई करता, घर के लिये आवश्यक चीज़ें लाकर देता । इन सब बातों के लिये गणेशदत्त को कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी; मगर उसे इस मेहनत का फल भी मिल जाता था । अपने बड़े भाई के लिये सारे काम करते देख लोग उसकी बड़ी तारीफ़ करते थे; और साथ ही इस सहानुभूति की वजह से उसे मेहनताना भी अधिक दिया करते थे ।

इस प्रकार छः महीने बीत गये । बैरागी फिर रामधन के घर आ पहुँचा । रामधन ने बैरागी को बताया कि इन दिनों वह बहुत ही खुश है । इसके बाद बैरागी ने गणेशदत्त को बुलवाया ।

गणेशदत्त आकर बैरागी के पैरों पर गिर कर

हज़म करने की बात मेरे बड़े भाई न मानें, तो मुझे क्या करना होगा ?'' गणेशदत्त ने शंका प्रदर्शित की ।

''जो लोग ऐसे लालच में पड़ते हैं, उनको मैं क्षमा नहीं कर सकता । तुम्हारे बड़े भाई ने अगर यह बात स्वीकार न की, तो ऐसी हालत में प्याज़ तुम्हारे पेट से निकल कर रामधन के पेट में चला जायेगा और उस हालत में यह परिस्थिति उल्टी हो जायेगी । तुम्हारा बड़ा भाई तुम्हारे लिये सारे काम करने लगेगा । जब तक लालच में न पड़ो, तब तक यह सब चलता रहेगा । इसके बाद वह प्याज़ फिर तुम्हारे शरीर में प्रवेश करेगा । इसलिये, अब तुम अपनी समस्या खुद ही हल कर दो । अब तुम जा सकते हो । '' यों समझाकर बैरागी वहाँ से चला गया ।

गणेशदत्त बड़े भाई के पास गया और उसने बैरागी के कहे अनुसार रामधन से प्रार्थना की । मगर रामधन बोला, ''मैं अभी तक संतुष्ट नहीं हुआ हूँ । इसलिये प्याज़ हज़म नहीं कराऊँगा । ''

बोला, ''महानुभाव, अब मुझे हम दोनों के पेट भरने के लिये विशेष रूप से श्रम करने पड़ रहे हैं । मेरे सारे अपराध क्षमा कर आप कृपया अब मुझे इस मुसीबत से उबारिये । ''

बैरागी हँसकर बोला, ''देखो भाई, दुष्टों को दण्ड देने और सज्जनों का उपकार करने के लिये मैं ने इस न उबलनेवाले प्याज़ की सृष्टि की । अब तुम अपने बड़े भाई के पास जाकर उस से यह कहलवाओ - बिना उबले प्याज़ ! तुम ने मेरा अब तक जितना उपकार किया, वह पर्याप्त है । अब तुम हज़म हो जाओ ।- बस, प्याज़ हज़म हो जायेगा । इसके बाद तुम दोनों अलग अलग अपनी ज़िंदगी बसर कर सकते हो । ''

''साधुमहाराज, मान लीजिये, प्याज़ को

''भैया, लालच में पड़ोगे, तो उसका परिणाम भुगतना पड़ेगा तुम्हें । इसलिये मेरी बात मानो और संकल्प करो कि मेरे पेट में ही प्याज़ हज़म हो जाए । '' गणेशदत्त ने विनती की ।

रामधन वैसे स्वभाव से अच्छा आदमी था, लेकिन वह संकल्पमात्र से प्राप्त होने वाले सुखों का मोह त्याग नहीं पाया । स्वार्थी बना वह ! उसने अपने छोटे भाई की बातों पर बिलकुल

ध्यान नहीं दिया । बल्कि उसने तत्काल कह दिया, "न उबले प्याज़ अभी एक सौ सिक्के ला दो ।"

दूसरे ही क्षण वह प्याज़ गणेशदत्त के मुँह से बाहर आकर रामधन के मुँह में प्रवेश कर गया । रामधन ने बिना प्रयत्न ही उसे निगल डाला ।

"देखा न भैया ! मैं ने तुम्हें पहले ही चेतावनी दी थी, पर तुम नहीं माने ! अब, अभी से तुम मेरी इच्छाओं की पूर्ति करोगे । भोगो अपनी करनी का फल ।" गणेशदत्त ने कहा ।

रामधन भय से सिर से पाँव तक सिहर गया और बोला, "मैं नहीं जानता था कि इसका ऐसा परिणाम होगा । यह बात तो सही है, कि मैं लालच में आ गया । मेरी अकल अब ठिकाने आ गयी । तुम मुझे कृपया छोड़ दो न !"

"मैं भी अब पहले का गणेशदत्त नहीं रहा हूँ; इस अनुभव से खूब बदल गया हूँ । मेहनत करने से प्राप्त होनेवाले सुख और उत्तम व्यवहार में छिपे बड़प्पन को काफ़ी समझ गया हूँ । आज से हम दोनों मिल-जुल कर रहेंगे ।" यह उत्तर देकर गणेशदत्त ज़ोर से चिल्लाया, "बिना उबले प्याज़, तुम हज़म हो जाओ ।"

गणेशदत्त में आये परिवर्तन को देख रामधन विस्मय में आ गया और बोला, "मैं ने तो सोचा था, कि तुम मुझसे वे सारी चीज़ें फिर वसूल करोगे । तुमने ऐसा नही किया, इसलिये तुम ने मुझे जो कुछ दिया है; वह सब मैं तुम्हें लौटा देता हूँ ।"

"हम दोनों जब मिल-जुल कर रहने की ठान लेते हैं, तो अब तेरे-मेरे का भेद कैसा ?" गणेशदत्त ने कहा ।

धीरे-धीरे इन दो भाइयों की कहानी सारे गाँववालों को मालूम हो गयी । रामधन तथा गणेशदत्त परस्पर प्यार के साथ रहते हुए, थोडे ही दिनों में अपनी उन्नति कर सके । ग्रामवासियों ने अनुभव किया कि, सभी लोग इस प्रकार सच्चे भाईचारे का व्यवहार करें तो किसी बैरागी को अपनी महिमाओं का प्रदर्शन करने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी ।

व्यापार-वाणिज्य नीति

किसी गाँव में दयाराम नाम का एक किसान रहता था । उसके तीन बेटे थे । वे बड़े होशियार थे, पर उन सब में एक कमी थी । वे खेती-बाड़ी में अपने पिता की मदद नहीं करते थे । हमेशा व्यापार के बारे में ही चर्चा चलाते रहते थे । अब दयाराम ने निश्चय किया कि किसी न किसी प्रकार उनको राह रास्ते पर लाया जाए ।

दयाराम के तीन अभिन्न मित्र थे । एक कवि था, दूसरा राजनैतिक नेता था और तीसरा धर्मगुरु था । दयाराम ने सोचा हम तीनों की मदद से अपने पुत्रों में आवश्यक परिवर्तन लाया जाए ।

सब से पहले दयाराम अपने कवि-मित्र से मिला । उसने कवि को अपने ज्येष्ठ पुत्र की प्रकृति का परिचय कराते हुए प्रार्थना की – "मित्र, तुम कुछ भी उपाय करके मेरे इस लड़के सही रास्ते पर ले आओ । यों कहते हुए दयाराम ने अपने बड़े लड़के को कवि के हाथ सौंपा ।

इसी प्रकार दयाराम ने अपने मँझले बेटे को राजनैतिक नेता के पास तथा छोटे को धर्मगुरु के हाथ सौंपा दिया और वह निश्चिंत हो गया ।

दयाराम के बड़े लड़के को पहले साहित्य का व्यवसाय पसंद नहीं आया । लेकिन धीरे धीरे उसको साहित्य और काव्य में अभिरुचि पैदा हुई । अपने गुरु के गिरी माली हालत पर उसे तरस आया । उसने अपनी बुद्धि चलाकर गाँव के सभी कवि और लेखकों का एक संघ स्थापित किया और एक साहित्य-मंच बना दिया ।

उसने देखा कि कुछ साहित्यकार अपनी आर्थिक कठिनाइयों से लड़-झगड़ रहे हैं, तो कुछ यश के पीछे पागल बने हैं । बड़े लड़के ने उन साहित्यकारों की उत्तम रचनाएँ सस्ते दाम पर खरीद लीं और उन्हें भारी दाम पर बेच कर

मोहिनी जोशी

खूब धन कमाया । कुछ साधारण लेखकों की कृतियाँ अपने नाम पर प्रकाशित कीं ।

दयाराम के कवि-मित्र ने बड़े लड़के की गतिविधि देख कर पिता को समझाया – "दोस्त, तुम्हारे इस पुत्र की प्रकृति को बदलना मेरे लिए असंभव है । मैंने कोशिश की, पर सब बेकार ! माफ करो । "

उधर मँझला पुत्र राजनैतिक नेता के पास शिक्षा ग्रहण कर रहा था । उसको राजनैतिक दाँव-पेंच तथा जनता की समस्याएँ सर-दर्द मालूम हुई । राजनैतिक नेता ने उसके मन में राजनीति के प्रति रुचि पैदा करनेकी भरसक कोशिश की । पर मँझले पुत्र को धीरे धीरे राजनीति का सत्य स्वरूप मालूम हुआ । उसने स्थानीय नेताओं के साथ घनिष्ट मित्रता की । जनता की कमज़ोरियों का अच्छा अध्ययन किया । धार्मिक विद्वेषों को खूब भड़काया । चुनाव के समय धन का तथा आवश्यकतानुसार अपने सहकारियों द्वारा बल-प्रयोग करा कर वह जनता का प्रतिनिधि बन बैठा ।

यह उसकी सब करतूत देखकर राजनैतिक नेता घबड़ा गया । वह अपने मित्र दयाराम के पास गया और अपनी असहायता प्रकट करते हुए उसने कहा – "दोस्त, ग़लत मत समझना । तुम्हारे मँझले पुत्र को सुधारना अपने बस की बात नहीं । वह तो मुझसे कहीं अधिक आगे निकल गया है । "

धर्मगुरु के आश्रय में आए दयाराम के तीसरे लड़के से धर्मगुरु ने कहा – "तुम मेरे पास आ गये, बहुत अच्छा हुआ । ऐहिक मामलों में वणिक्-वृत्ति ही बहुधा प्रधान होती है । तुम्हारे मन में उचित परिवर्तन लानेके
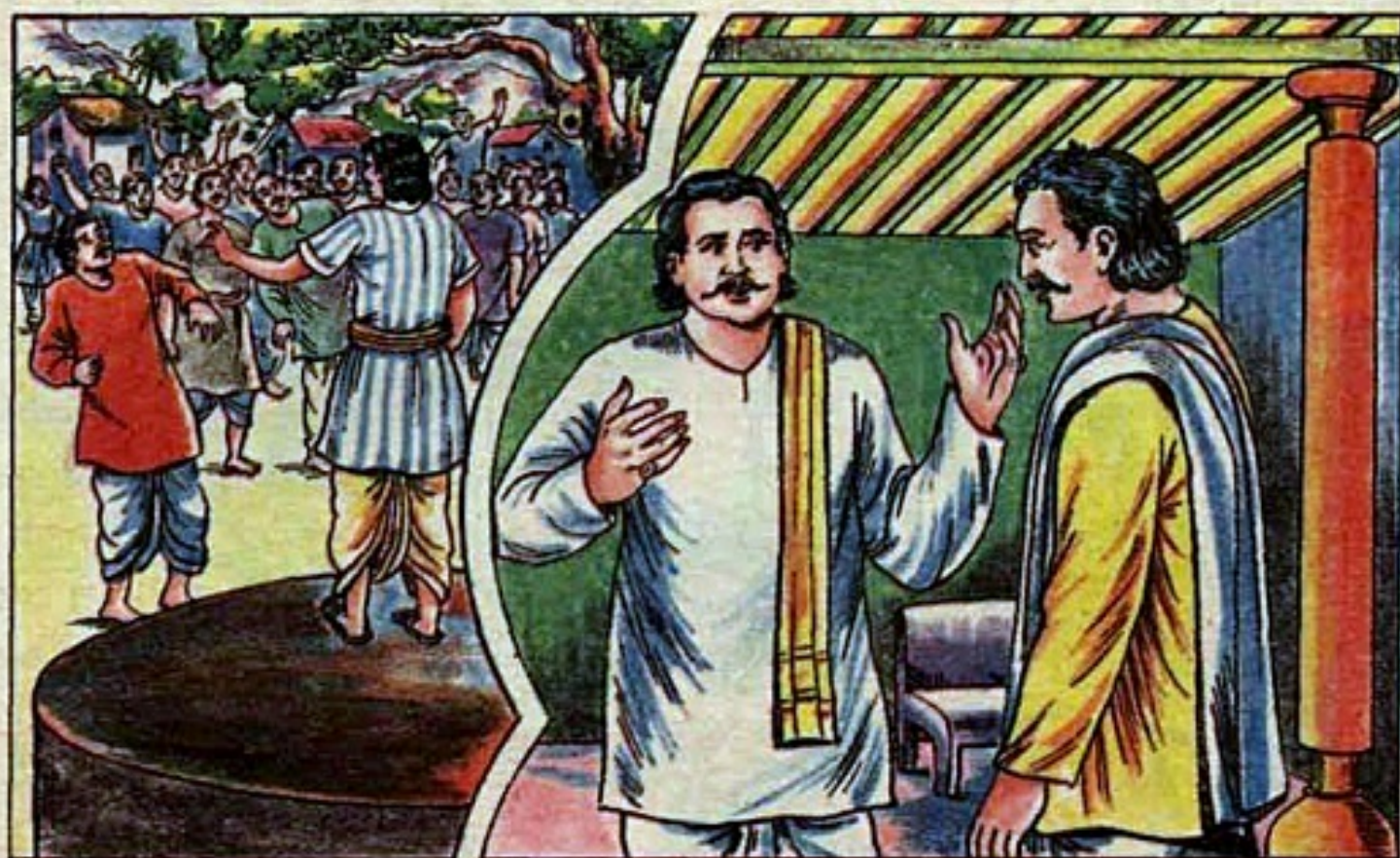
लिए धर्म ही सर्वोत्तम औषधि है ।'' उपदेश देते हुए धर्मगुरु ने बड़े वात्सल्य-भाव से उसके पीठ पर हाथ फेरा ।

दयाराम के इस तीसरे पुत्र को धर्मगुरु का भक्ति का आवेश पसंद नहीं आया । उसने धीरे-धीरे भक्तों के साथ अपना परिचय बढ़ाया । उनकी कमज़ोरियों का भली भाँति अध्ययन किया । वह अच्छी तरह जान गया कि असमर्थ व्यक्ति संकट में पड़ कर व्याकुल हो जाता है ।

उसने भक्तों के बीच इस बात का प्रचार किया कि वह गुरु से बढ़कर अधिक महिमाएँ रखता है । गुरु के आदेश के विरुद्ध उसने चन्दा इकट्ठा करके एक बढ़िया मंदिर बनवाया । वहाँ बड़ी संख्या में भक्तों का आना-जाना शुरू हुआ । भक्तों से कई उपहार प्राप्त होने लगे । मंदिर का सुचारु रूप के प्रबंध करने के लिए उसने एक समिति बना ली, और खुद उस समिति का अध्यक्ष बन गया । मंदिर को जो आमदनी होती उसका थोड़ा हिस्सा मंदिर के प्रबंध में और दान-धर्म में खर्च करके बाक़ी पैसा बचाते हुए वह 'धर्मशिरोमणि' कहलाने लगा ।

दयाराम के धर्मगुरु मित्र ने उसको सारा हाल सुनाया -''मित्र, मैं विवश हूँ, तुम्हारे पुत्र की मानसिक दशा में परिवर्तन लाना मेरे लिए केवल असंभव है । मुझे लगता है किसी और के लिए भी यह संभव नहीं होगा । वणिक्-वृत्ति उसमें कूट-कूट कर भरी हुई है ।''

इस प्रकार तीनों लड़के दयाराम के घर लौटाये गये । फिर दयाराम ने सोचा क्यों न उनकी वर्तमान प्रवृत्ति को ही प्रोत्साहन दिया जाए ! अपने पास वाला सारा संचित धन दयाराम ने अपने लड़कों को पूँजी के रूप में दे दिया और उन्हें पासवाले नगर में भेजा । वहाँ तीनों ने व्यापार करना प्रारंभ किया । अपनी वणिक्-बुद्धि के कारण थोड़े ही समय में वे लखपति बन गये ।

दयाराम अच्छी तरह समझ गया - व्यापार तो तेल जैसा है, वह व्यापार-वाणिज्य को छोड़ और किसी में घुल-मिल नहीं जाता ।

पिता और पुत्र

एक दिन देवी लक्ष्मीजी ने अपने पति श्री सत्यनारायणजी से कुतूहलवश पूछा, "स्वामी, हररोज़ लाखों लोग अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने के लिये आप की प्रार्थना करते हैं, मगर आप उनकी कामनाओं की पूर्ति क्यों नहीं करते ? जो प्रार्थना करने आता है, उसकी कामना की पूर्ति करना तो एक पुण्य-कर्म है । और आप में यह शक्ति है अवश्य । मैं चाहती हूँ, आप प्रार्थियों की विनती टाले नहीं । करेंगे न ऐसा ही ? "

स्वामी ने मुस्कुराते हुए कहा, "प्रार्थना करनेवाले व्यक्ति की अर्हता का विचार किये बिना ही मैं हर एक व्यक्ति की इच्छापूर्ति करता जाऊँ तो अनर्थ होगा, उन्हें सुख प्राप्त नहीं होगा । खुद वे अर्हता रखते हैं या नहीं इस बात का विचार किये बिना ही अनेक प्रकार की कामनाएँ करते रहते हैं । मैं उनका हितैषी हूँ, शुभाकांक्षी हूँ; इसलिये कुछ लोगों की इच्छापूर्ति मैं नहीं करता हूँ । मैं उनकी इच्छा की पूर्ति करता हूँ, जिनके मन में सद्भाव है, जो परोपकार करते हैं, जो दीन-दरिद्रों की सेवा करते हैं । हर किसी की इच्छापूर्ति करना मेरे बस की बात नहीं है । "

मगर इस उत्तर से लक्ष्मीदेवी संतुष्ट नहीं हुईं । यह भाँपकर भगवान ने उनसे कहा, "तब तो सुनो, मैं तुम्हें एक उदाहरण सुना देता हूँ - किसी गाँव में सूर्यप्रसाद नाम का एक आदमी रहता था । उसके कोई सन्तान नहीं

थी । उस दम्पति ने सन्तान की कामना करते हुए मेरी प्रार्थना की; तो मैंने सूर्यप्रसाद को एक पुत्र प्रदान किया । उस दम्पति ने शिशु का नामकरण किया - सत्यनारायण ! शिशु के जनम के थोड़े दिन बाद ही उसकी माता का देहान्त हुआ । सूर्यप्रसाद बच्चे को सही ढंग से पाल नहीं सका । परिणामस्वरूप लड़का ज़िद्दी और दुर्गुणी निकला । पिता-पुत्र के बीच खाई पैदा हुई । पिता की कोई भी बात बच्चे को अच्छी नहीं लगती थी । पिता सोचने लगा, - ऐसे लड़के का हमारे घर में जनम न लेना ही अच्छा था । उल्टे पुत्र को लगता था कि पिता उसका आजन्म शत्रु है । इससे दोनों सुख से वंचित रहे ।

यह बात सुनकर लक्ष्मीजी ने कहा, "बेचारे ! कोई और एक वरदान देकर उन्हें पार लगाइये न ! इच्छापूर्ति का परिणाम अच्छा नहीं निकला तो दूसरे किसी वरदान से आप उसे सुधार भी सकते हैं । क्यों नहीं ऐसा करते ?"

भगवान लक्ष्मीदेवी के अनुरोध को टाल न सके, उन्हों ने उनकी बात मान ली ।

एक दिन बालक सत्यनारायण दोपहर को ही स्कूल छोड़ कर घर चला आया । पिता ने पूछा, "बेटे तुम इतनी जल्दी स्कूल से कैसे लौट आये ? तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक नहीं है क्या ? अध्यापक की अनुमति लेकर घर आये न ?"

"मेरे पेट में दर्द हो रहा है पिताजी ! मैंने अध्यापक से वैसे कह दिया । उन्होंने कहा - घर जाकर आराम करो । मैं घर चला आया । " पुत्र ने जवाब दिया ।

"देखो, आज ही रसोइयन ने लड्डू और बड़े बनाये हैं, मगर तुम्हारे भाग्य में उन्हें खाना लिखा नहीं है शायद ! चलो, तुम अपने कमरे में जाकर बिस्तर पर लेटे रहो, आराम करो । देखो, पेट को ज़रा आराम मिला तो दर्द जाता रहेगा । ज्यादा खाने से पेट में दर्द होता है । स्वास्थ्य के लिए थोड़ा कम खाना ही अच्छा होता है । " इतना कहकर सूर्यप्रसाद ने सत्यनारायण को उसके कमरे में भेजकर बाहर से कुंड़ी चढ़ा दी ।

इसके बाद कमरे के बाहर सूर्यप्रसाद और अन्दर सत्यनारायण अपने-अपने सोच में डूब गये ।

"बचपन कैसा सुखदायक होता है । पाठशाला में जाना, पढ़ना, वक्तपर खाना खाकर

इधर-उधर घूमना, खेलकूद में समय काटना कितना सुखकर होता है । घर-गृहस्थी, धन-सम्पत्ति आदि की बिलकुल चिन्ता नहीं होती । बदहज़मी की शिकायत नहीं होती इस उम्र में । मेरा बेटा तो निरा अड़ियल निकला । मैं अगर उसकी उम्र का होता, तो कैसे वक्त पर पाठशाला जाता, ढंग से पढ़ाई करता ! पढ़ने-लिखने में क्या मज़ा है ! मैं तो, दिन-रात पुस्तकें पढ़कर ज्ञान बढ़ाता रहता । विद्वान् पंडित बनता !" सूर्यप्रसाद सोचता रहा ।

कमरे के अन्दर सत्यनारायण के मन में भी कुछ इसी प्रकार के विचार आ रहे थे, "कम्बख्त ! यह स्कूल और पढ़ाई ! हर बात में बड़ों की दखल । उन पर तो गुस्सा उतारने व डाँटने वाले कोई नहीं होते ! भरपेट लड्डू-बड़े वे खा सकते हैं, कोई बन्धन डालनेवाला नहीं । पाठशाला जाने की कोई ज़रूरत नहीं उन्हें, चाहे जहाँ आ-जा सकते हैं । मैं अगर पिताजी जैसा उम्र में बड़ा होता, तो क्या ही मज़ा आता ! यह स्कूल की झंझट न होती । भूखा न रहना पड़ता । इधर-उधर घूमता-भटकता रहता । किसी के अनुशासन में रहनेकी आवश्यकता न होती । आजकल का यह जीवन तो जेल के समान है । "

"बेचारे ! इन दोनों की कामनाओं की पूर्ति कीजिये न, स्वामी !" लक्ष्मीदेवी ने भगवान से अनुरोध किया ।

स्वामी ने देवी की कामनापूर्ति की ।

इधर कमरे के बाहर सूर्यप्रसाद को बालक

सा लगा । उसने सहज रूप से उत्तर देने के बजाय आँखें लाल-पीली करके कहा, "अरे कम्बख्त, तुम इतने घमण्डी बन गये हो ? ठहरो, मैं तुम्हारे बाप से शिकायत करके तुम्हारी चमड़ी उधेड़वा दूँगा । " यूँ कहकर गोपाल ने हाथ की लाठी उठायी ।

अपने शरीर पर वार होने से पहले ही सूर्यप्रसाद वहाँ से भाग खड़ा हुआ । वह इतनी तेज़ी से भागा कि, उसे अपने आप पर आश्चर्य हुआ, शायद बचपन में भी वह इतनी तेज़ी से न दौड़ा होगा । मगर अब बड़े होने पर तो वह तेज़ कदम चल भी नहीं पाता था, उसका बदन कुछ भारी हो गया था । गोपाल उसकी अपेक्षा दुबला-पतला था, फिर भी वह दौड़कर उसका पीछा नहीं कर पाया - इसका उसे आश्चर्य हुआ ।

सत्यनारायण की आकृति प्राप्त हुई मिली । मगर उन दोनों को इस परिवर्तन का बिल्कुल पता न चला ।

सूर्यप्रसाद किसी कार्यवश बाज़ार में गया । उसे लगा, गाँव के सारे मकान ऊँचे हो गये हैं । सिर उठानेपर ही वह दो मंजिलवाले मकान देख सकता था । मगर सूर्यप्रसाद ने इस बात पर विशेष ध्यान न दिया ।

बाज़ार में सूर्यप्रसाद को उसका एक पुराना दोस्त गोपाल दिखाई दिया । सूर्यप्रसाद ने पूछा, "अरे गोपाल, कुशल तो हो न ? बहुत दिन हुए तुम दिखाई नहीं दिये । यहीं थे कि कहीं बाहर गाँव गये थे ?"

मगर गोपाल का व्यवहार उसे कुछ विचित्र लगा।

अब दौड़ते दौड़ते वह रुक गया और मन ही मन सोचने लगा –"मैं इस तरह दौड़ क्यों रहा हूँ ? गोपाल मुझे मारना क्यों चाहता है ?" – उसे अपनी करनी पर हँसी आ गयी और वह ठहाके मारकर हँसने लगा ।

इतने में किसी ने सूर्यप्रसाद के कंधे पर हाथ रखा और पूछा, "अरे, तुम झूठ बोल कर घर भाग गये न पाठशाला से ?"

सूर्यप्रसाद चौंक पड़ा । उसने मुड़कर देखा – सात-आठ वर्ष का एक बालक उस की ओर देख कर परिहास पूर्ण ढंग में हँस रहा है ।

उसे देख सूर्यप्रसाद आपे से बाहर हो गया । "अबे, तुम कौन हो ? मेरे कंधे पर से हाथ उठाते हो या मैं तुम्हारी हड्डी-पसली तोड़ दूँ ?" सूर्यप्रसाद ने अपना हाथ उठाते हुए उस लड़के को डाँटा ।

"अरे, इतनी घमण्ड ! ठीक है, कल देखूँगा मास्टरजी ही मार-मार कर तुम्हारी कैसी चटनी कर देंगे ।" यह कहकर वह लड़का अपनासा मुँह लेकर चला गया ।

एक छोटे बच्चे के मुँह से ऐसा मज़ाक सुनकर तो सूर्यप्रसाद अवाक् रह गया ।

अब भरे बाज़ार में चकित खड़े रहकर सोचने के लिये भी सूर्यप्रसाद के पास समय नहीं था । उसे घर के लिये आवश्यक चीज़ें दूकान से खरीदकर घर भेजनी थी । वह साहूकार सोमगुप्त की दूकान में जाकर बोला, "गुप्ता साहब, मुझे आधा बोरा चावल, दस सेर अरहर की दाल और दो सेर इमली

चाहिये ।"

"चाहे जो चीज़ मिलेगी, मगर रुपये तो दो ।" सोमगुप्त ने कहा ।

सोमगुप्त की यह बात सूर्यप्रसाद को बहुत बुरी लगी । मगर उसे आश्चर्य भी लगा कि सोमगुप्त तो मज़ाक में भी ऐसी बात उससे नहीं कर सकता । उसने अपनी ज़ेबें टटोलकर देखा, पर जेब में रुपये न थे, उसमें तो खड़िया का एक टुकड़ा, धागा, मोर का एक पर, कपड़े के थान पर से निकले हुए चित्र और न जाने क्या क्या चीज़ें ठुसी मिली !

अब तो सूर्यप्रसाद के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा । उसे लगा कि उसके साथ कोई दगा हो गया है । इतने में उसे लगा कि उसे बड़ी भूख लगी है । ऐसी भूख तो उसे पहले कभी नहीं लगती थी ! मिठाई की दूकान पर जाकर पेट भरना चाहा, तो उसकी ज़ेब में एक कौड़ी भी नहीं थी । दूकान के पास खड़े होकर उसने देखा, अन्दर बैठे लोग पूड़ी-कचौड़ी और मिठाइयाँ उड़ा रहे थे !

इसी बीच दूकान आनेवाले देवराज पर उसकी नज़र पड़ी । सूर्यप्रसाद को उस में अपने प्रतिबंब के बदले उसके बेटे का प्रतिबिम्ब दिखाई दिया ! सूर्यप्रकाश अपनी आँखोंपर विश्वास न कर सका ! झुककर उसने अपने पैरों की ओर देखा । पैर एकदम छोटे थे ! पैरों में चप्पल न थे; धोती की जगह छोटा निकर था ! सिरपर हाथ रखकर टटोला, तो गंजे सिर की जगह मुलायम बाल हाथ लगे ! मुँह पर हाथ फेरा तो दाढ़ी-मूँछें भी गायब ! आँखों पर चश्मा नहीं था, फिर भी दृष्टि साफ़ थी ।
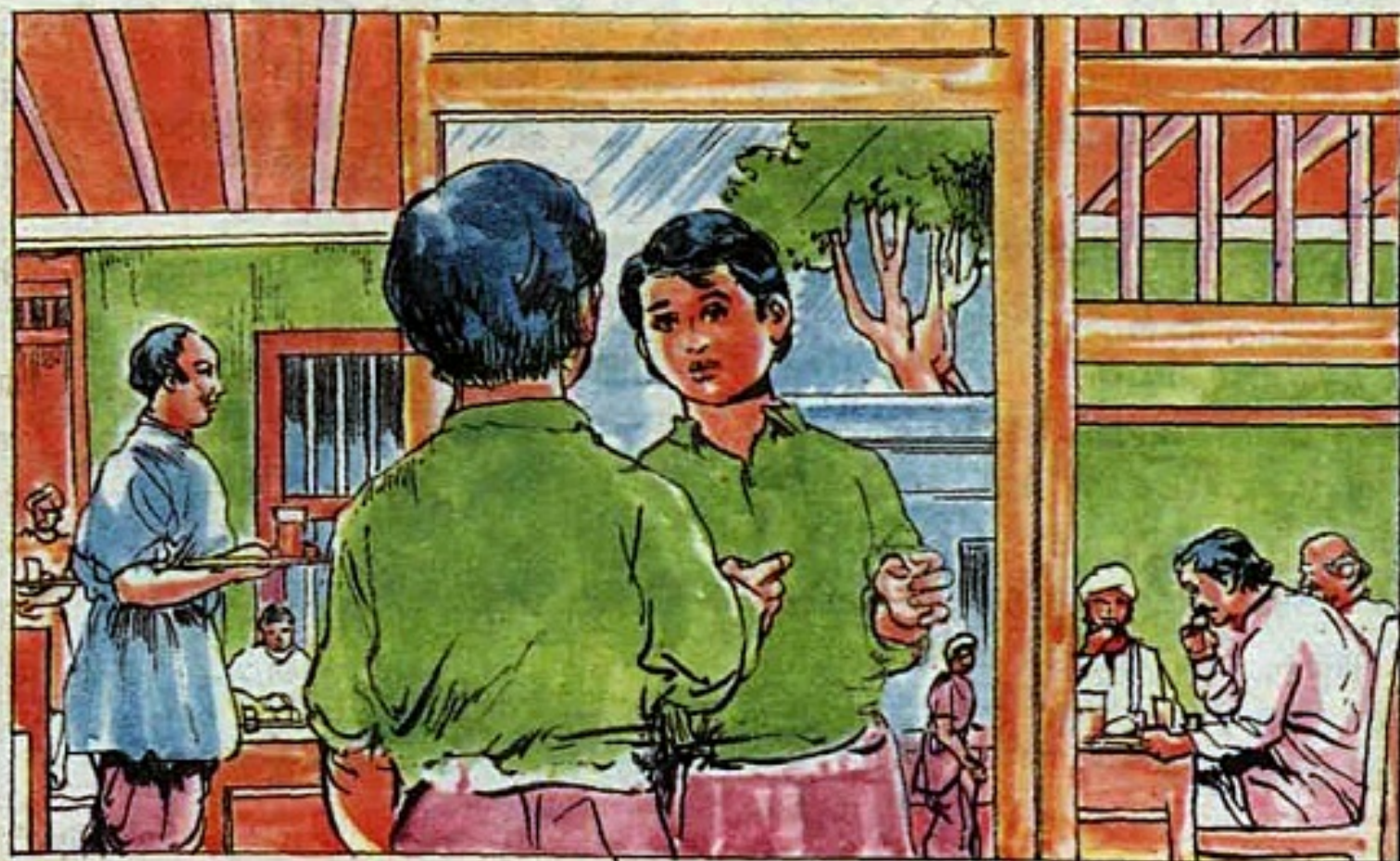
सूर्यप्रसाद अब अपने में हुए परिवर्तन को भली भाँति समझ गया । उसे तो अपने पुत्र का रूप प्राप्त हुआ था, तो अब पुत्र का क्या हुआ होगा ? यह सवाल उठाते ही वह डर सा गया ।

इस बीच इधर सत्यनारायण पर क्या गुज़री थी ? - कमरे में बैठे बैठे उसने सोचा तो पिताजी बाहर गये होंगे । यह विचार कर, उसने दरवाज़े पर लाते जड़ाना शुरू किया । मगर उसके पैर न जाने क्यों - दुखने लगे । इतने में रसोइयन वहाँ आ पहुँची और किवाड़ पर चढ़ी कुण्डी खोलकर बोलने लगी, "मालिक, आप को कमरे के अन्दर किसने बन्द किया ? उस नटखट सत्यनारायण की तो यह करनी नहीं है ?"

"क्या बक रही हो, मुँह बन्द करो ।" सत्यनारायण ने गुस्से में आकर कहा ।

अब तक मालिक ने रसोइयन से इस ढँग में कभी बात नहीं की थी । आज अचानक ऐसी बात सुनकर वह सकपकायी ! उसे बहुत बुरा लगा । उसे क्या मालूम कि सत्यनारायण ही प्रकट रूप में मालिक जैसा दिखाई दे रहा है ।

इसके बाद बालक सत्यनारायण उछल-उछल कर सीढ़ियाँ पार कर के ऊपरी माले पर जाने को निकला । उसे पता था, कि पिताजी रुपये कहाँ रखते हैं । पर वह छलाँग लगाकर सीढ़ियाँ पार नहीं कर पाया । उसे अपना बदन भारी लगा और पैर सुन्न लगे । दो-तीन सीढ़ियाँ पार कर वह अचानक औंधे मुँह गिर गया । उस के माथे पर चोट आयी और घुटने पर का चमड़ा छिल गया ! कराहते हुए उसने किसी तरह सीढ़ियाँ पार की; मगर उसके पैर थककर चूर हो गये थे ।

उसने सोचा, चलो अब रसोइयन से लड्डू और बड़े माँग कर खा लें । रसोइयन को बुलाकर उसने नाश्ता माँगा ।

रसोइयन एक थाली में बड़े, लड्डू व मिठाइयाँ ले आयी और बोली, "मालिक, आपने अभी थोड़ी देर पहले ही नाश्ता किया था । यह तो बालक सत्यनारायण के लिये रखा था मैं ने । आप फिर खायेंगे तो आप को शायद हज़म न हों, पेट में दर्द भी हो जाए शायद ।"

"तुम ने मुझे नाश्ता खिलाया है ? झूठ मत बोलो । मेरे लिये जो रखा है, वह मुझे देने में

रोती क्यों हो ? रख दो वहाँ । '' बालक ने डाँटा ।

रसोइयन अपने कानों पर विश्वास न कर पायी । उसे लगा, आज यह मालिक को क्या हो गया है ? पागल तो नहीं हुए ? यह विचार आते ही उसने वैद्य को बुला लाने के लिये नौकर को भेज दिया ।

वैद्य का आना ठीक ही साबित हुआ । क्यों कि तुरन्त दूसरी बार नाश्ता करने के कारण सत्यनारायण के पेट में दर्द होने लगा था और वह बिस्तर पर करवटें बदल रहा था । पेट-दर्द की दवा देकर वैद्य चला गया ।

वैद्य को "आप, अजी," वगैरह आदर से पुकारते सुन उस पीड़ा की हालत में भी सत्यनारायण को आश्चर्य हुआ । वैद्य के जाने के थोड़ी देर बाद उस के पेट का दर्द मिटता गया और वह उठ बैठा । तिजोरी की चाभी लेकर वह अलमारी के पास पहुँचा और चौंक पड़ा; क्यों कि अलमारी के आइने में उसे अपने पिता की आकृति दिखायी दी !

"उफ़ ! मर गया । " कहते हुए उसने मुड़कर देखा । मगर पिता का तो कहीं पता न था । उसने फिर आइने में देखा और फिर उसे पिताजी ही दिखाई दिये । गंजा सिर, मूँछें व चश्मा दिखाई दिया । उसने अपने चेहरे को टटोलकर देखा तो उस पर मूँछें व चश्मा हाथ लगा ।

सत्यनारायण का सिर चकरा गया । वह सोचने लगा और उसे पता चला कि वह पिता के रूप में परिवर्तित हो गया है । इससे वह

कुछ चिन्तित ज़रूर हुआ; मगर एक ओर उसे प्रसन्नता थी । क्यों कि अब उसे न स्कूल जाने की आवश्यकता थी और न ही उसकी मार पीट होने की संभावना थी । वह चाहे जो खा-पी सकता था और जब जहाँ चाहे, आ-जा सकता था । सारा पैसा अब उसी के हाथ में होगा । ये सारे विचार करके व खुशी से उछल पड़ा और फिर गिरकर ढ़ेर सा हुआ ।

अब उसके मन में दूसरा विचार यह उठा कि जब वह अपने पिता के रूप में बदल गया है, तो उस के पिता का क्या हाल होगा ?

इस सवाल के जवाब के रूप में - सीढ़ियों पर आहट हुई और उसने देखा कि आठ साल का बालक सीढ़ियाँ चढ़कर चला आ रहा है । जब उसने ठीक तरह से देखा तब उसे

वह खुद ही चला आ रहा हो जैसे लगा । अब सत्यनारायण को मालूम हुआ कि उसके पिता को उस का रूप प्राप्त हुआ है । उसने अपने पिता को एक अच्छा सबक़ सिखाना चाहा । अलमारी की चाभियाँ उसने अपनी ज़ेब में रख दीं ।

सूर्यप्रसाद ऊपर आ पहुँचा । अपनी आकृति के रूप में अपने पुत्र को खड़े देख वह हँसने लगा । मगर सत्यनारायण को हँसी नहीं आयी । बल्कि उसे तो डर लगा ।

"तुम जानते हो, हमारी आकृतियाँ इस प्रकार क्यों बदल गयी हैं ?" बालक रूपी पिता ने पूछा ।

सत्यनारायण भोलेपन से बोला, "मैं इस बारे में कुछ भी नहीं जानता हूँ । "

"हमारे सामने बड़ी जटिल समस्या आ खड़ी हुई है । लगता है कि अब लोगों को विश्वास दिलाना बहुत मुश्किल होगा कि तुम मैं, और मैं तुम हो । मुझे अपने परिवार की कई समस्याएँ सुलझानी हैं - धन भी वसूल करना होगा । मेरे सामने तो विविध कामों की भीड़ लगी है - सारे गाँव में मेरे दर्ज़नों मित्र हैं । सारे काम मैं इस आकृति को लेकर कैसे कर पाऊँगा । सब के पास मैं कैसे जा सकूँगा । यदि मुश्किल से यह साबित भी कर सकूँगा कि मैं अमुक व्यक्ति हूँ, तब भी वे मेरे साथ पूर्ववत् व्यवहार नहीं करेंगे । अब क्या होगा ?" पिता ने कहा ।

पुत्र ने सिर हिलाकर जवाब दिया, "मैं इस बाबत कुछ भी नहीं जानता हूँ । "

"हाँ यह तो बताओ, तुम्हारी पढ़ाई वगैरह का क्या होगा ?" सूर्यप्रसाद ने पूछा ।

"पढ़ाई ? हूँ ! अब इस शरीर को लेकर स्कूल में बैठ जाऊँ । वाह, - खूब हुई । " सत्यनारायण ने व्यंग्य कसा ।

"फिर क्या होगा बेटा ? तुम स्कूल जाओगे या पढाई ही बन्द करोगे ? पढ़ोगे नहीं तो आगे चलकर अपनी बदकिस्मती पर रोओगे । मगर मुझे तो अपने सारे मामले निबटाने हैं । यह कहकर सूर्यप्रसाद मेज़ की दराज़ें ढूँढ़ने लगा ।

[क्रमशः]

बेताल में भूत

दृढवती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, वृक्ष से शव को उतार कर उन्होंने अपने कन्धे पर डाल दिया और हमेशा के जैसे मौन मौन होकर वे श्मशान की ओर चलने लगे । तब शव में वास करनेवाले बेताल ने कहा, "राजन्, इस मध्यरात्रि के समय इस डरावने श्मशान में तुम इतने कष्ट उठाते हुए दृढ लगन के साथ अपना कार्य संपन्न करना चाहते हो । तुम्हारा यह प्रयास प्रशंसनीय ज़रूर है; मगर ऐसे काम में मुस्तैदी और विवेक न बरते, तो इतना सारा कष्ट व्यर्थ साबित हो सकता है । इसके उदाहरण-स्वरूप मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ । श्रम को भुलाने के लिये श्रीमुख नामक व्यक्ति की यह कहानी सुनो । "

बेताल कहानी सुनने लगा ।-

किसी गाँव में श्रीमुख नाम का एक युवक रहता था । वह अत्यन्त सुन्दर था । उसके मन में भाग्यवान बनने की प्रबल इच्छा थी । इसलिये उसने अनके साधुओं के दर्शन किये ।

बेताल कथा

चला आया और पिछवाड़े में उसने गड्ढा खोदना शुरू किया । थोड़ी गहराई तक जाते ही एक बन्द बोतल उसके हाथ लगी । बोतल दिखने में बड़ी ही सुन्दर लग रही थी और उसके अन्दर कोई द्रव पदार्थ हिल रहा था । वह सोचता रहा कि इस बोतल में कौनसा द्रव है । उसकी क्या विशेषता है ? यह कोई धोखे की चीज़ तो नहीं है ? उसने बोतल को सब तरफ से देखा, पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया । श्रीमुख ने बोतल की डाट खोल दी ।

बस ! दूसरे ही पल में उस की चारों तरफ़ धुएँ जैसी कोई चीज़ छा गयी । उसकी दृष्टि उस धुएँ के कारण मन्द हो गयी और उसने अपनी आँखें बन्द ही कर ली । फिर थोड़ी देर बाद धुआँ कम हुआ सा लगा और उसने आँखें खोलीं - सामने एक भयानक सूरतवाला भूत खड़ा था ।

उनके सामने अपनी इच्छा प्रदर्शित की और उनसे आशीर्वाद पाये ।

एक बार एक साधु ने उसके चेहरे को सूक्ष्मता से देखकर कहा, "देखो, तुम्हें एक दुष्ट ग्रह सता रहा है । तुम जितने भी कष्ट करो, यह ग्रह तुम्हारी तरक्की होने नहीं देता है । इसी ग्रह के कारण आज तक तुम्हारी प्रगति नहीं हो पायी । तुम जो भी कोशिशें करते हो वे बेकार साबित होती हैं । किसी काम में तुमको सफलता नहीं मिली । इसका एक उपाय मेरे पास है । मैं तुम्हें एक तावीज़ देता हूँ । उसे तुम अपने घर के पिछवाड़े में गाड़ दो तो तुम्हारा नसीब खुल जायेगा ।" यह कह कर उसने एक तावीज़ श्रीमुख के हाथ में दे दिया ।

बड़ी खुशी से तावीज़ लेकर श्रीमुख घर

श्रीमुख के तो होश ही उड़ गये ! मगर वह भूत उसकी ओर प्यार भरी नज़र लगाकर बोलने लगा, "सुनो, डरो नहीं ! मैं तुम्हारी ही वजह से बंधनमुक्त हो पाया हूँ । तुम्हारे प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ । तुम्हें देखने पर ऐसा लगता है, कि तुम दरिद्रावस्था में हो, इसलिये प्रत्युपकार के रूप में मैं तुम्हें भाग्यवान बनने का उपाय बता दूँगा । या तुमको और कुछ चाहिए तो बता दो । तुम्हारी कोई भी अधूरी इच्छा मैं पूर्ण कर सकता हूँ । मुझे बंधनमुक्त करनेवाले के लिए मैं कुछ भी कर सकता हूँ । बिना डरे अपने मन की बात बेखटके कह दो ।"

भूत के मुँह से ये बातें सुन कर श्रीमुख का डर रफू-चक्कर हो गया । उसने भूत की बातें ध्यान से सुनीं । भाग्यवान बनने का उपाय यूँ था - वहाँ से दस कोस की दूरी पर स्थित विष्णुपुर के एक संपन्न व्यक्ति रत्नगुप्त की इकलौती बेटी के शरीर में भूत प्रवेश करेगा । मगर श्रीमुख के वहाँ पहुँचते ही भूत उस युवती के शरीर को छोड़कर भाग जायेगा । इस बात की खुशी में रत्नगुप्त अपनी पुत्री का विवाह श्रीमुख से करा देगा ।

भूत ने यह सारा विवरण बताकर श्रीमुख को समझाया, "सुनो श्रीमुख, मेरी स्मरणशक्ति बहुत कमज़ोर है । मैं तुम्हें शायद उस वक्त पहचान नहीं पाऊँगा । इसलिये तुम मेरे पास पहुँचते ही संकेत के रूप में दो बार कहो - 'बोतल का भूत; बोतल का भूत !' तब सब बातें मुझे याद आयेंगी और मैं वहाँ से चला जाऊँगा। मैं मानता हूँ, मेरा प्रस्ताव स्वीकार करने में तुम्हें कोई झिझक नहीं होनी चाहिए । हम दोनों दोस्त हैं । तुम्हारी भलाई के लिए ही मैं यह सब कह रहा हूँ । मान जाओ । "

इसपर श्रीमुख ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया और भूत गायब हो गया ।

भूत के कहे अनुसार ही बाद की बातें घटीं । रत्नगुप्त की बेटी को छोड़ते वक्त भूत ने श्रीमुख को चेतावनी दी, "सुनो श्रीमुख, मैंने तुम्हारे उपकार का प्रत्युपकार किया । अब मुझको मत छेड़ो । अगर छेड़ने की धृष्टता करोगे, तो मैं तुम्हें ज़िन्दगी भर सताता रहूँगा । "

श्रीमुख ने रत्नगुप्त की बेटी श्रीवल्ली के साथ विवाह किया और थोड़े दिन सुखपूर्वक बिताये । श्रीमुख ने मन-ही-मन भूत को धन्यवाद दिये । अब उसकी क़िस्मत खुल गई थी । उसको किसी बात की कमी न थी । उसके मन में जो कुछ आए, वह कर सकता था ।

फिर एक दिन उसे समाचार मिला, कि उस देश की राजकुमारी के शरीर में भूत ने प्रवेश किया है । राजा ने घोषणा दी, कि जो व्यक्ति भूत भगा देगा, उसके साथ वह राजकुमारी का विवाह करा देगा । श्रीमुख को आशंका थी, कि यह भूत वही बोतल वाला हो तो वहाँ न जाना ही बेहतर होगा ।

श्रीमुख इन विचारों में डूबा था, इतने में वहाँ एक साधु आया । उसने श्रीमुख से

कहा, "बेटे, तुम ने रत्नगुप्त की बेटी को भूत के चंगुल से बचाया है । अब वही भूत राजकुमारी पर सवार हुआ है । राजकुमारी की पीड़ा मुझ से देखी नहीं गयी । मेरे पास भूतों को वश में करने के मन्त्र हैं, मगर वे मन्त्र अपने परिचय के भूतों पर ही कारगर सिद्ध होते हैं । जिन भूतों से मेरा परिचय नहीं, उन पर मेरे मंत्र कुछ काम नहीं करते । इसी लिए मैं तुम्हारे पास आया हूँ । मुझे निराश नहीं करो । मैं तुम्हारा उपकार जनम भर नहीं भूलूँगा । इस भूत को पहचानने का कोई उपाय तुम मुझे सुझा दो तो मुझे उसका बहुत उपयोग हो सकता है । मैं राजकुमारी को मुक्त कर सकूँगा । "

साधु का अनुरोध सुनकर श्रीमुख थोड़ी देर कुछ सोचता रहा । फिर बोला, "महात्मन्, आप ने तो सब कुछ त्याग दिया है । राजकुमारी का भूत अगर आप भगा भी देंगे, तो उससे आप को क्या लाभ हो सकता है ? मैंने बहुत कुछ सोचा, पर मेरी समझ में नहीं आता कि आप राजकुमारी का भला क्यों करना चाहते हैं ? मैं एक दूसरी बात आपको सुझाता हूँ । अगर आप मान सकते हैं तो देखिए । लेकिन मेरा आग्रह नहीं है । मैं इस देश का राजा बनने के सपने देख रहा हूँ । उस भूत को भगाने का मौका मुझे दीजिये न !"

साधु हँसकर बोला, "यह काम तुम करना चाहो, तो तुम्हें भूत से भी अधिक उत्तम व्यक्ति होना चाहिये । यदि ऐसा न हो, तो उल्टे भूत ही तुम पर सवार हो जाएगा । मैं नहीं चाहता कि तुमको किसी प्रकार का कष्ट हो । होम करते हाथ नहीं जलना चाहिए । कहो, क्या सोचते हो ?"

इसपर श्रीमुख निर्भय होकर बोला, "स्वामीजी, भूत की अपेक्षा मानव अवश्य ही उत्तम होता है । इसलिये आप बेखटके मुझे मन्त्रोपदेश दीजिये । आप मेरे लिए बिलकुल चिन्ता मत कीजिए । मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता । "

साधू ने यह बात मान ली और भूत का विवरण माँगा । श्रीमुख ने उसे बता दिया कि रत्नगुप्त की पुत्री के शरीर से भगाये उस भूत को 'बोतल का भूत, बोतल का भूत' कहकर पुकारना चाहिये ।

साधू ने श्रीमुख को मन्त्रोपदेश करके कहा,

"तुम यह मन्त्र पढ़कर राजकुमारी के सामने एक बोतल रख दो और कहो, - बोतल का भूत, बोतल का भूत ! चलो, बोतल में घूस जाओ ।- तब भूत राजकुमारी को छोड़ कर बोतल में प्रवेश करेगा उसी समय तुम बोतल में काग लगाकर उसे ज़मीन में गाड़ दो । "

श्रीमुख बहुत ही खुश हुआ । वह एक बोतल लेकर राजकुमारी से मिलने गया । उसे देख राजा प्रसन्न हुआ; क्यों कि उसे मालूम हो गया था कि श्रीमुख ने ही रत्नगुप्त की बेटी का भूत भगाया था । इसलिये राजमहल में श्रीमुख को खास आदर-सत्कार प्राप्त हुए । शाही मेहमान बन कर श्रीमुख राजमहल में रहा । उसके निवास व भोजन का उत्तम प्रबंध राजा ने किया । उसके मनोरंजन की सामग्री वहाँ प्रस्तुत थी ।

एक सुमुहूर्त में श्रीमुख ने राजकुमारी के सामने एक बोतल रख दी; साधू के सिखाये अनुसार मन्त्रोच्चारण किया और कहा, "बोतल का भूत, बोतल का भूत ! तुम बोतल में चले जाओ । "

बस, दूसरे ही पल में राजकुमारी चीख उठी और चारपाई से उठकर ज़मीनपर गिर पड़ी । मगर उसी क्षण इधर श्रीमुख खुद ही विकट हँसी हँसते हुए भूत सवार हुए आदमी जैसा उछलने-कूदने लगा !

वहाँ उपस्थित लोगों को यह समझते देर न लगी कि भूत ने राजकुमारी को छोड़ श्रीमुख के भीतर प्रवेश किया है । उसी समय वह साधु वहाँ आ पहुँचा । उसने श्रीमुख की ओर देखते हुए किसी मन्त्र का उच्चारण किया और गंभीर स्वर में बोला, "बोतल का भूत, तुम बोतल में प्रवेश करो । " सब लोग देखते रहे कि अब क्या होता है । सब ने एक अजूबा देखा ।

दूसरे ही क्षण श्रीमुख ज़ोर से चिल्लाकर पीछे की ओर गिर पड़ा । उसकी देह से धुएँ जैसी कोई चीज़ निकल कर बोतल के भीतर चली गयी । साधू ने झट बोतल में डाट लगायी और दूर ले जाकर बोतल को कहीं गाड़ दिया ।

थोड़ी ही देर में राजकुमारी तथा श्रीमुख होश में आये । अपने वचन के अनुसार राजा ने राजकुमारी का विवाह श्रीमुख के साथ कराने का आश्वासन उसे दिया; मगर श्रीमुख ने यह प्रस्ताव अस्वीकार करते हुए कहा, "राजकुमारी

का भूत भगाने का श्रेय साधू को मिलना चाहिये ।

इसलिये वे जो निर्णय करेंगे उसे हम सब को मानना चाहिये । "

राजा ने साधू का निर्णय जानना चाहा । साधू ने कहा, "श्रीमुख ही राजकुमारी के योग्य वर है । "

इसपर श्रीमुख ने आश्चर्य में आकर साधू से पूछा, "महानुभाव, मैं मानव हूँ । " इतना कहकर श्रीमुख वहाँ से चला गया ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा, "राजन्, श्रीमुख का यह कथन कहीं मूर्खतापूर्ण तो नहीं है ? राजा ने कन्या का विवाह श्रीमुख के साथ कराना चाहा; साधू ने भी उसीको योग्य पति घोषित किया; फिर भी श्रीमुख ने अपने आप को भूत से अधिक गया बीता क्यों कहा ? इस संदेह का उत्तर जानकर भी न दो, तो तुम्हारा सिर फूटकर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा । " इसपर विक्रमार्क ने कहा – "ठीक तरह विचार करने पर श्रीमुख के कथन का भाव सहज ही खुल जाता है । दूसरों से प्राप्त सहायता या उपकार को भूलकार कृतघ्नता से व्यवहार करनेवाला हर व्यक्ति भूत-प्रेतों से भी अधिक गया-बीता होता है । श्रीमुख को पहले तो मालूम नहीं था कि बोतल में भूत है । कुतूहलवश डाट खोलनेपर भूत स्वतन्त्र हुआ । उसने जानबूझकर भूत को स्वतन्त्र करने के ख्याल से बोतल नहीं खोली थी । फिर भी भूत उसके उपकार से प्रसन्न हुआ और दरिद्रता के शिकार हुए श्रीमुख को उसने धनवान बनाया । मगर राजकुमारी के साथ विवाह कर के एक राज्य के राजा बनने के स्वार्थी विचार के वशीभूत होकर उसने अपने उपकारकर्ता भूत को फिर बोतल में बन्द करना चाहा । मगर भूत उसके मन्त्रोच्चारण से भी उसके वशीभूत नहीं हुआ; उल्टे उसीने श्रीमुख को अपने वशीभूत बनाया । इस से यह स्पष्ट हुआ, कि वह भूत से भी गया-बीता है । इस सूक्ष्म मर्म को समझ लेने के कारण ही श्रीमुख ने राजकुमारी के साथ विवाह करना अस्वीकार किया और वहाँ से चला गया । "

इस प्रकार जवाब देकर राजा के पुनः मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर फिर वृक्ष पर जा बैठा । (कल्पित)

खोटा सिक्का

चक्रधरपुर के राजा का नाम था चन्द्रशेखर । एक बार वह अपने मंत्री और सेनापति के साथ जंगल में शिकार खेलने गया । दोपर तक वह जंगली जानवरों का शिकार खेलता रहा । सेवकों ने एक झरने के पास डेरा डालकर खाना बनाया । शिकार से वापस आने पर सब खाना खाने बैठे ।

खाना खाते समय राजा मंत्री व सेनापति के साथ शिकार के बारेमें चर्चा कर रहा था । इतने में एक गरीब यात्री राजा के सामने आया और उसने दान माँगा ।

राजा ने यात्री को एक चाँदी का सिक्का दान में दिया और फिर मंत्री से बातें करने में लग गया । एक-दो मिनट के बाद ग़रीब यात्री फिर राजा के पास लौट आया और बोला - "प्रभु, गुस्ताखी माफ़ हो, आपने मुझे जो सिक्का दिया है, वह खोटा है, इसे वापस लेकर मुझे दूसरा सिक्का दे दीजिएगा ?"

यात्री का प्रस्ताव सुन कर राजा को क्रोध आया । उसने गरजकर कहा - "हमारे पास दूसरा सिक्का नहीं है । जो दिया है, उसे लेते जाना । "

यात्री ने कहा - "तब तो प्रभु, जो सिक्का आपने दिया है, उसे वापस लेने में क्या हर्ज़ है ? कृपा कीजिए और यह दिया हुआ खोटा सिक्का वापस लीजिएगा । "

राजा ने गुस्से में आकर कहा - "तुम्हें यह कैसा अहंकार है भला ? मैंने जो दिया उसे वापस ले लूँ ? चलो, चले जाओ चुपचाप यहाँ से । नहीं तो हम तुम्हें निकाल देंगे यहाँ से । "

यात्री ने बड़ी नम्रता से निवेदन किया - "महाराज, आप मुझे क्षमा कीजिए । इस खोटे सिक्के को आप वापस लेंगे तो मुझ पर बड़ा उपकार होगा । कृपया मेरी प्रार्थना स्वीकार करें । " इतना कह कर यात्री ने वह सिक्का राजा के चरणों के पास रखा और फिर वह वहाँ से चला गया ।

शारदा साहा

मंत्री व सेनापति के साथ राजा को यात्री का यह विचित्र व्यवहार बड़ा आश्चर्यजनक लगा । राजा ने अपने सेवकों को भेजकर यात्री को वापस बुलाया ।

यात्री के लौटने पर राजा ने उससे पूछा - "सुनो, मैं इस देश का राजा हूँ । सिक्का भले ही खोटा हो, फिर भी मेरे प्रति आदर-भाव से तुम इस सिक्के को अपने पास रख सकते ! मान लो, मैंने इसे वापस ले लिया, तब भी इससे तुम्हारा क्या प्रयोजन सिद्ध होगा भला ?"

"महाराज, यह खोटा सिक्का अपने राज्य की टकसाल में ही ढल गया है न ?" यात्री ने पूछा ।

यह प्रश्न सुन कर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ । इतने में मंत्री ने बीच में दखल देते हुए पूछा - "फिर भी तुम्हारे मन में ऐसा संदेह क्यों पैदा हुआ ?"

"मुझे लगता है, हमारी टकसाल में अयोग्य या दगाबाज़ कर्मचारी काम करते हैं । " यात्री ने उत्तर दिया ।

अब सेनापति खीझ उठा, कुछ गुस्से के साथ बोला - "उसके बारे में विचार करना हमारा काम है । वह हम करेंगे । तुम राजा के प्रश्न का उत्तर दो । "

यात्री ने नम्रता के साथ अपना निवेदन पेश किया - "देखिए, यह सिक्का खोटा है, कहीं चलेगा नहीं । मैं यों ही इसे कहीं फेंक नहीं दे सकता । पर इसे अपने साथ रखना भी मेरे लिए दुख की बात है । क्योंकि जब भी मैं इसे देखूँगा, तब इस विचार से मुझे दुख होगा कि राजा ने मुझे अच्छा सिक्का दिया होता तो कितना अच्छा होता । अब दूसरे ढँग से सोचिए । अगर राजा यह सिक्का वापस ले लें, तो मैं सिक्के की बात भूल जाऊँगा और समझूँगा कि राजा ने मुझे कुछ दान दिया ही नहीं । "

मंत्री ने यात्री की तारीफ़ की और राजा से कहा - "महाराज आपने देखा न ? यात्री ने खोटे सिक्के को आपके चरणों के पास रखा । इसका मर्म क्या था ?"

राजा मुस्कुरा दिया । फिर राजा ने यात्री को भरपेट भोजन दिया । बाद में अपने गले का हार उतारकर उसे उपहारस्वरूप दे दिया ।

ज्ञान का खज़ाना

इस मास का ऐतिहासिक महापुरुष

गुरु हरगोविन्द

१४ जून, १५९५ को पंजाब के अमृतसर ज़िले के वडाली गाँव में जन्मा हरगोविन्द अपने उमर की ११ साल की आयु में ही सिक्खों का गुरु बना । अपने चालचलन और कोई निर्णय लेने में आश्चर्यजनक दूरदर्शिता दिखाने की क्षमता से वह अपनी उमर से कुछ प्रौढ़ ही लगता था ।

वह हमेशा अपने साथ दो तलवारें रखता था - एक अपनी शारीरिक शक्ति के चिन्ह-स्वरूप और दूसरी आध्यात्मिक शक्ति के चिन्ह-स्वरूप ! उसने एक सैन्य बनाया और सैनिकों को उसने खुद सैनिक-शिक्षा दी । मुगल बादशाह से उनका लड़ाई-झगड़ा हमेशा ही चलता रहता था । एक बार उसको ग्वालियर के क़िले में कैदी बनाकर रखा गया था और बाद में मुक्त किया गया था ।

१६२८ में एक दिन वह अमृतसर के पास के जंगल में शिकार खेलने गया था । उसी दिन बादशाह शाहजहाँ भी वहीं शिकार खेलने आया था । दोनों पक्षों में कुछ झगड़ा खड़ा हुआ और लड़ाई छिड़ी । शाहजहाँ वाला पक्ष पराजित हुआ । मगर गुरु जानता था कि मुगल इसका बदला लेने ज़रूर आयेंगे । उसने अपने सैन्य का पुनर्गठन किया । दो-तीन बार उसका मुगलों से टकराव हुआ और हर बार उसी की जीत हुई । बाद में उसने अपना स्थानान्तर हिमालय की तलहटी के किरतपुर में किया । वहाँ उसनें अपना समय सिक्खों को सुसंगठित करने में और उनको तत्त्वज्ञान देने में व्यतीत किया । ३ मार्च १६४४ को उसकी मृत्यु हुई ।

वह कौन ?

एक राजा ने एक विशाल मन्दिर बनाने की आज्ञा दी । बारह सौ कारीगरों ने बारह सालों में वह मन्दिर बनवाया । वह एक विशाल स्मारक बना । पानी में बाढ़ आने के समय सागर के पानी से पूरा मन्दिर घिर जाता था ।

मन्दिर का कलश बिठाने का काम ही बाक़ी था । मगर उसको बाकी के साधारण मन्दिरों से अलग एक विशेष ढंग से बनवाना था । दुर्दैव से प्रमुख कारीगर उसको बनाने की विधि भूल गया था ।

एक छोटा लड़का अपने पिता से मिलने उस स्थान पर आया था । वह करीब बारह साल की उमर का था, मगर उसने मन्दिर बनवाने की कला की सारी किताबें पढ़ डाली थीं । उसने कारीगरों को कलश बिठाने की विधि बता दी और उसी अनुसार काम पूरा किया गया । मगर लड़के ने उन कारीगरों को आपस में यूँ कानाफूसी करते सुना - "जो हम से नहीं बना, वह एक छोटे लड़के ने कर दिखाया - यह बात जब हमारे महाराज जान जायेंगे, तो हम पर क्या गुज़रेगी ? " लड़का बहुत ही भावुक था । वह पूनम की रात थी, सागर ने मन्दिर को घेर लिया था । लड़का मन्दिर के शिखर पर चढ़ गया और वहाँ सागर में कूद कर हमेशा के लिये अदृश्य हो गया ।

इस पौराणिक कथा का यह लड़का कौन था ?

पृष्ठ ८ देखिये
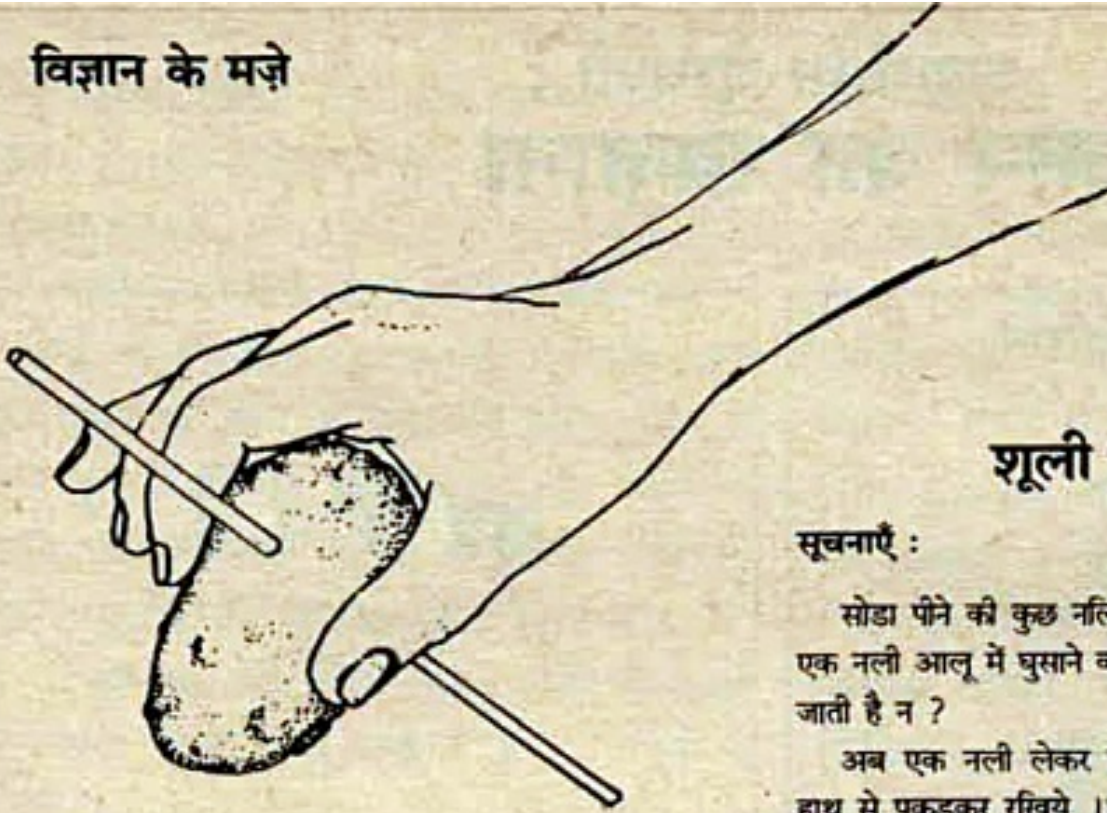
शूली पर चढ़ा !

सूचनाएँ :

सोडा पीने की कुछ नलियाँ और एक कच्चा आलू लीजिये । एक नली आलू में घुसाने की कोशिश कीजिये । नली टेढ़ी हो जाती है न ?

अब एक नली लेकर टेबुलपर सीधे खड़ी कर अपने एक हाथ से पकड़कर रखिये । दूसरे हाथ में आलू लेकर नली के ऊपर के सिरेपर उसे ज़ोर से पटक दीजिये ।

सावधान ! नली को अपने हाथ में घुसने न दीजिये !

क्या होता है और क्यों ?

आलू अगर नली के ठीक माथे दे मारा गया तो उसे शूल पर चढ़ाये जैसी नली उस में घुस जायेगी । मगर, अगर नली पर ठीक ऊपर से सीधे आघात न किया जाय तो वह झुक जायेगी । फिर भी थोड़ी और कोशिश करने से नली का छोर आलू में से होकर दूसरी ओर से सीधे बाहर निकल आयेगा ।

असल में, ऊपर से सीधे किये गये आघात को झेलने जितनी भरपूर ताकत नली में होती है । इससे, नली के तल का छोर मेज़ पर टिका होने से नली हिलेगी नहीं । नली के छोर से आलू मृदु होने के कारण जब जोर से उसपर मार दिया जाता है, तो वह आलू में घुस जाती है ।

आप के पास दो आलू हों तो क्या मेज़पर रखे एक आलू के ऊपर नली को पक्की पकड़कर ऊपर से दूसरा आलू मार कर दोनों आलुओं में आप नली को घुसा सकते हैं ? करके दखिये !

नली को आलू पर सीधे मार कर आप उसे आलू में घुसा सकेंगे ?

संसार के आश्चर्य

चीन की विशाल दीवार

अवकाश-यात्री जब ऊपर ऊपर जाते रहते हैं और पृथ्वी पर के शहर और पहाड़ियाँ अस्पष्ट होते होते अदृश्य हो जाती हैं, तब शायद सब से आखिर में अदृश्य होने वाला स्मारक होगा - चीन की विशाल दीवार ! १,५०० मील, याने कि पृथ्वी के परिधि का बारहवाँ हिस्सा जितनी जगह पर मनुष्य द्वारा निर्मित यह सब से बड़ी वास्तु है । इस में २४,००० दरवाज़े तथा मीनारें हैं । इसकी औसत ऊँचाई २५ फीट है और तल में यह २० से ३० फीट व माथे पर १५ फीट चौड़ी है । इस दीवार पर एक ही समय अनेक घुड़सवार एक क़तार बनाकर घोड़े दौड़ा सकते हैं । ईसापूर्व तीसरी शताब्दि में बादशाह शिन व्हांग टी द्वारा शुरू किया गया इस दीवार का रचना कार्य १७०० साल तक चलता रहा और इस को पूरा किया गया मिंग घराने द्वारा (१३६८-१६४४) ।
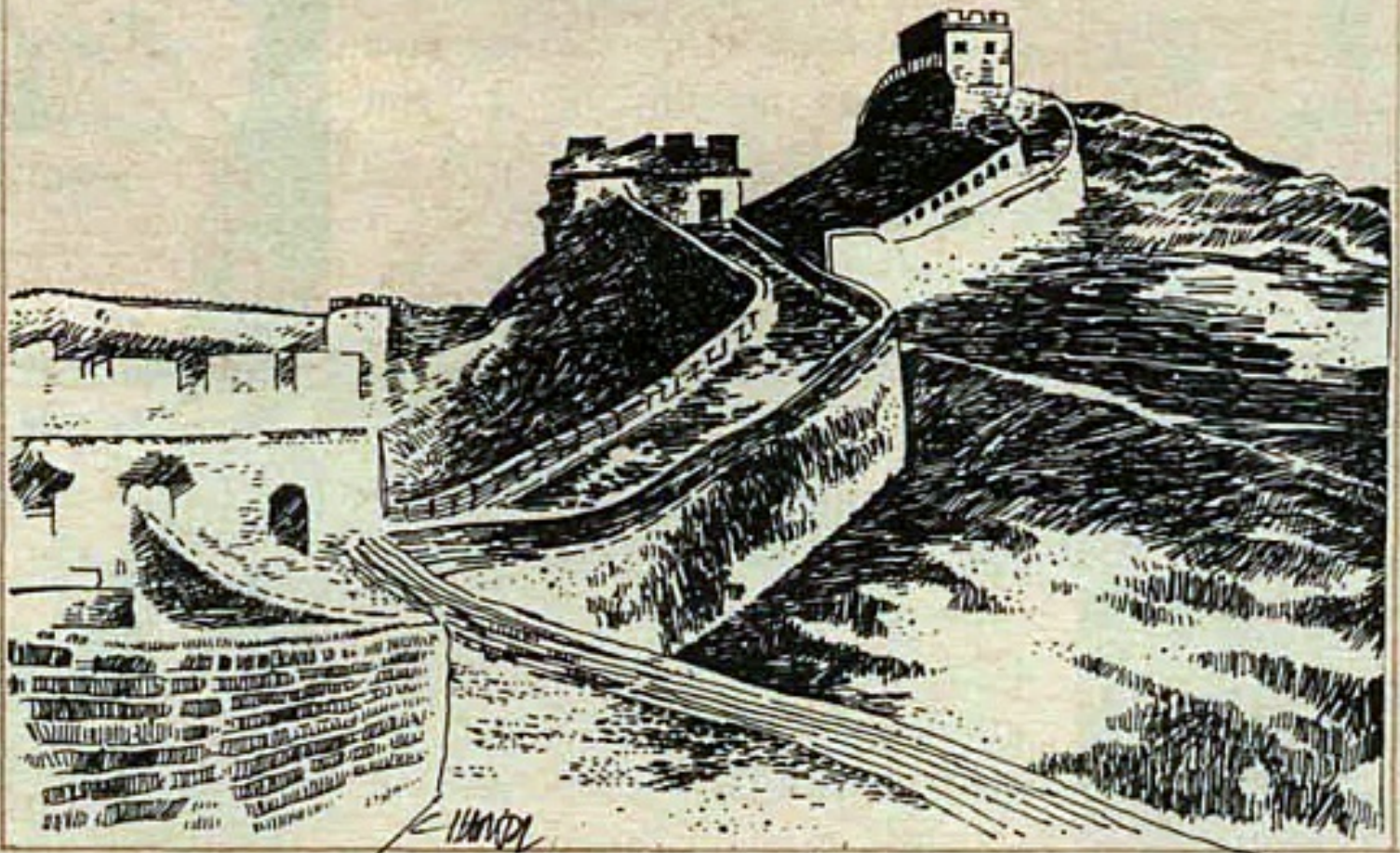
संसार की महान् घटनाएँ

एक युद्ध, जिसने शान्ति-तत्त्व को बढ़ावा दिया

येशु ख्रिस्त के जन्म के ३०० साल पहले चन्द्रगुप्त ने मौर्य राजवंश की स्थापना की । उसके बाद उसका पुत्र बिन्दुसार उसका उत्तराधिकारी बना । उसके बाद आया उसका बेटा, जो 'सम्राट अशोक' नाम से बड़ा ही प्रसिद्ध बना । मौर्य साम्राज्य बढ़ाने की उच्चाकांक्षा से प्रेरित राजकुमार की हैसियत से ही उसने अपना कारोबार शुरू किया । एक के बाद एक राज्य जीतते हुए वह कलिंग (आज का उड़िसा) तक आया । उस समय कलिंग का राजा कौन था, इसके बारे में कोई जानकारी नहीं है, मगर आक्रमणकारी को भगा देने के इरादे से वहाँ के सब के सब लोग एक होकर बड़े शौर्य के साथ लड़े । मगर अशोक का सैन्य ज़्यादा ताक़तवर था । एक लाख लोग लड़ते लड़ते धराशायी हुए और एक लाख, पचास हज़ार लोगों को युद्ध कैदी बनाया गया । और भी बहुत से लोग युद्ध के परिणाम-स्वरूप मर गये । इस भयानक रक्तपात और लोगों की दुर्दशा ने अशोक के मन को बदल दिया । फिर कभी वह युद्ध करने के इरादे से बाहर नहीं निकला । खुद बौद्ध धर्म स्वीकार कर उसने शान्ति और
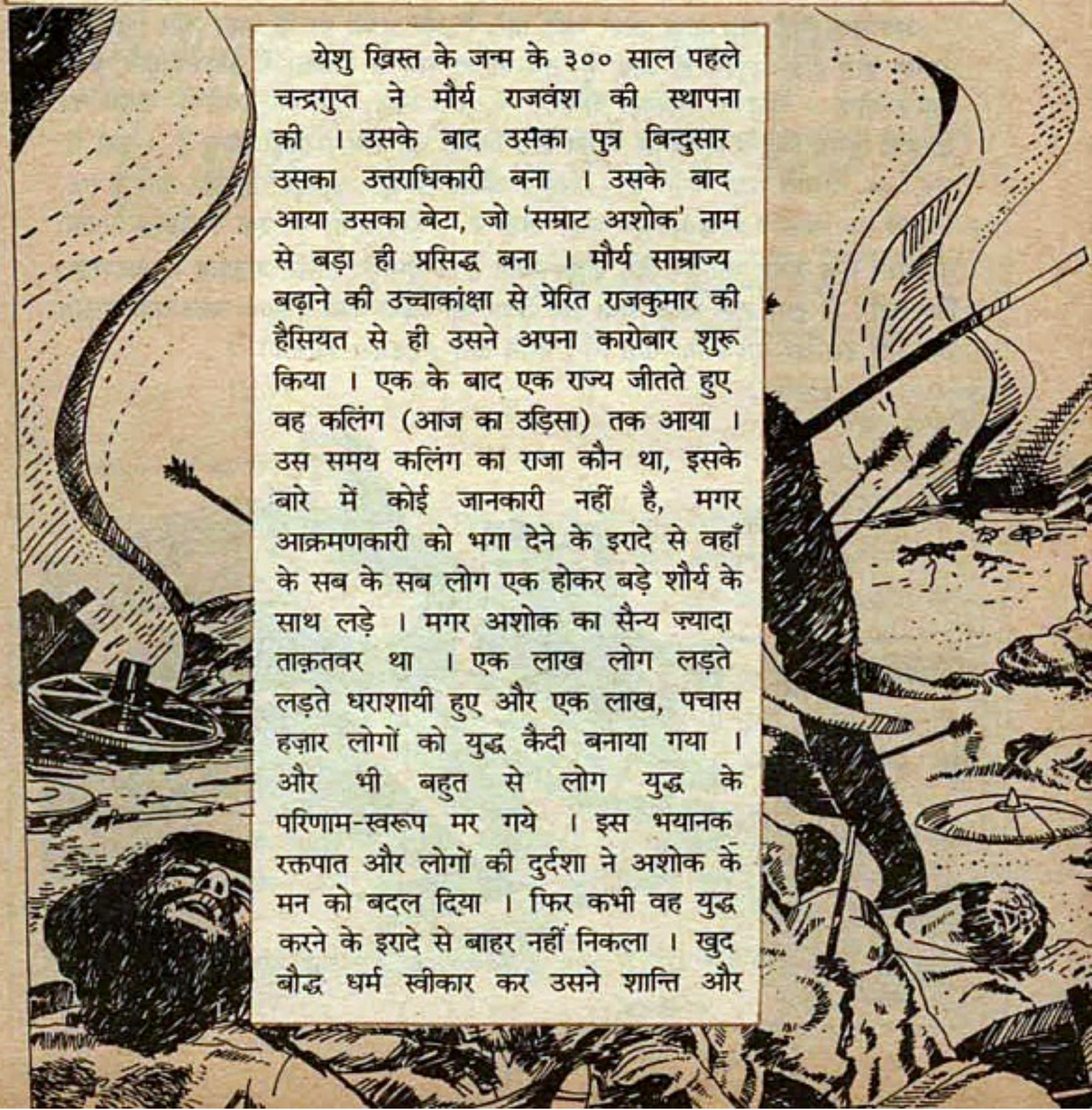
अहिंसा तत्त्व का प्रचार शुरू किया । प्रसिद्ध लेखक एच.जी. वेल्स लिखते हैं, "इतिहास के पन्नों में लिखे गये दस लाख सम्राटों में - अशोक का नाम - अकेले अशोक का ही - तारे जैसा चमकता है !"

भुवनेश्वर शहर के पास, दया नदी के किनारे, धौली नामक एक स्थान पर यह कलिंग-युद्ध छिड़ा था । वहाँ एक टीले पर अशोक द्वारा खुदवाया गया शान्ति-संदेश स्थित है ।

भारत के अतीत में झाँक कर देखें ।

१. किस भग्न किले के साथ तीन सुप्रसिद्ध स्त्रियों के नाम जुड़े हुए हैं ?

२. वे स्त्रियाँ कौन कौन हैं ?

३. आख़िर मीराबाई के साथ क्या हुआ ?

४. और कौनसी स्त्री-संत के साथ यही हुआ ?

५. गौतम बुद्ध से कुछ ही पहले कौन से राजकुमार ने अपना राज्य त्याग कर एक बड़े धर्म का पुनरुत्थान किया ?

६. उसका जन्म कहाँ हुआ था ?

७. कौनसा प्रसिद्ध राजा भूख के कारण मरा ?

८. उसकी यह अवस्था किसने की ?

पृष्ठ ८ देखिये

विज्ञान, आविष्कार और खोज की दुनिया

१. गिरगिट की ज़बान कितनी लम्बी हो सकती है ?
२. दुनिया में सब से ज़्यादा उपयोग की जानेवाली तरकारी कौन ?
३. दुनिया का सब से दुर्लभ पौधा कौनसा है ?
४. आप के परिचित जानवरों में कौनसा जानवर पूर्णतः बहरा होता है ?
५. इंग्रजी भाषा में कौनसे अक्षर का सब से ज़्यादा उपयोग किया जाता है ?
६. आप के शरीर में कुल कितनी हड्डियाँ हैं ?
७. आप की नाड़ी किस गति से चलती है ?
८. हाथी की नाड़ी किस गति से चलती है ?
९. ध्रुवप्रदेशीय रीछ का वज़न कितना हो सकता है ?
१०. चार पैरों वाले जानवरों में सब से तेज़ दौडनेवाला जानवर कौनसा है ?

पृष्ठ ८ देखिये ।

१. कौनसा मुग़ल शहाजादा हिन्दू धर्मग्रन्थों का ज्ञाता था ?

२. शिवाजी के गुरु रामदास द्वारा लिखे गये ग्रन्थ का नाम क्या था ?

३. संस्कृत का सब से पुराना शब्दकोश कौनसा है ?

४. सिक्खों के धर्मग्रन्थ का नाम क्या है ?

५. उसको किसने संग्रहित किया ?

६. उस में क्या लिखा हुआ है ?

७. भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार पानेवाला पहला विजेता कौन था ?

८. उसने किस भाषा में लिखा ?

९. आज जीवित भारतीय लेखक कौन है, जो चार साल की उमर में ही अंधा हुआ ?

पृष्ठ ८ देखिये ।

सभी भारतीय भाषाओं का एक शब्द सीख लें ।

संस्कृतः दक्षिण; **हिन्दी, मराठी, गुजराती, बंगला, कन्नड, आसामी और ओरियाः** दक्षिण; **पंजाबीः** दक्षण; **उर्दूः** जुनुब; **काश्मीरीः** जोनुब; **सिन्धीः** दख्नु; **तेलुगुः** दक्षिणमु; **तमिलः** तेरकु; **मलयालमः** तैकुन् ।

आप को विश्वास है ?

* कि इतवार सभी के लिये छुट्टी का दिन है ?
* कि कोई महीना बिना पूनम के व्यतीत नहीं होता ?
* कि सब से विशाल पिरामिड ईजिप्त में है ?

नहीं, नहीं ।

* ग्रीक लोगों के लिये वह सोमवार है, पर्शियन के लिये मंगलवार है, मुस्लीमों के लिये साधारणतया शुक्रवार है और ज्यू लोगों के लिये शनिवार ।
* १८६६ का फेब्रुआरी महीना बिना पूनम का था । प्रकृति में ऐसा चमत्कार ढाई मिलियन वर्षों में फिर एक बार हो सकता है ।
* ईंटों और मिट्टी से बना, सब से विशाल पिरामिड मेक्सिको में है, जो पहली शताब्दि में निर्माण किया गया । १७७ फूट ऊँचा यह पिरामिड ४५ एकड़ ज़मीन पर स्थित है । अर्थात् ईजिप्त का केऑप्स पिरामिड सब से ऊँचा (४८० फूट) है; मगर वह सिर्फ़ १३ एकड़ ज़मीन पर स्थित है ।

उत्तरावलि

वह कौन ?

धर्मपाद

इतिहास

१. चित्तौड़गढ ।

२. रानी पद्मिनी, मीराबाई और पन्ना ।

३. ऐसा माना जाता है कि द्वारिका में वह भगवान कृष्ण की मूर्ति में समाविष्ट हो गयी ।

४. तमिलनाडु की आंडाल । वह श्रीरंगम् के रंगनाथस्वामी में समाविष्ट हुई, ऐसा माना जाता है ।

५. महावीर ने ईसापूर्व छठी शताब्दि में जैन धर्म का पुनरुत्थान किया ।

६. वैशाली ।

७. मगध का राजा बिम्बिसार ।

८. उसके पुत्र अजातशत्रु ने ।

विज्ञान

१. उस के शरीर जितनी लम्बी; या उससे भी अधिक ।

२. प्याज़ ।

३. वह सिल्व्हरस्वोर्ड वनस्पति का एक प्रकार है, जो हवाई द्वीप के सुप्त ज्वालामुखी के मुख पर उगती है ।

४. जिराफ ।

५. E ।

६. दो सौ छः ।

७. सर्वसाधारण स्वस्थ आदमी की नाड़ी की गति प्रति मिनट पचहत्तर होती है ।

८. प्रति मिनट पच्चीस ।

९. उसका वज़न १००० पौण्ड तक हो सकता है ।

१०. चीता । वह प्रति घण्टे ७० मील की गति से दौड़ सकता है ।

साहित्य

१. शाहजादा दारा शिकोह ।

२. दासबोध ।

३. अमरकोष ।

४. आदि ग्रन्थ ।

५. पाँचवा गुरु अर्जुनमल ने ।

६. गुरु नानक के और उसके तीन उत्तराधिकारियों द्वारा लिखे पद और हिन्दू व जैन संतों के कुछ पद ।

७. कविवर जी. शंकर कुरुप ।

८. मलयालम ।

९. वेद मेहता, जो अमेरिका में रहता है ।

नेहरु की कहानी – ५

सन १९२० में जवाहरलाल की माताजी तथा पत्नी की तबियत बिगड़ गई । उन्हें वे मसूरी ले गये । जिस होटल में वे ठहरे थे, वहाँ कुछ अफगानवासी भी थे । वे ब्रिटनवालों के शत्रु थे । इस लिए एक ब्रिटिश न्यायाधिकारी ने जवाहरलाल से यह आश्वासन माँगा कि वे अफगानवासियों से बातचीत न करेंगे ।

वैसे जवाहरलाल के मन में उन अफगानवासियों से बातचीत करने का कोई विचार था नहीं, पर ऐसा आश्वासन देने से उन्होंने साफ इन्कार किया । इसके परिणामस्वरूप उनको आदेश मिला कि वे देहरादून ज़िला छोड़कर कहीं बाहर चले जाएँ । उसके अनुसार जवाहरलाल अपनी माता व पत्नी को छोड़कर इलाहाबाद चले गये । वहाँ उन्होंने किसानों का एक जुलूस देखा ।

ये सब किसान प्रतापगढ़ ज़िले के गाँवों से आये थे । नगरवासियों को अपनी मुसीबतों व तकलीफों से परिचित कराने वे आये थे । जवाहरलाल से मिलने पर उन्होंने आग्रह किया कि वे स्वयं उनके साथ चलकर उनकी व्यथा की कथा देखते हुए उनके गाँवों का भ्रमण करें ।

जवाहरलाल ने सर्वप्रथम सुदूर स्थित गाँवों का दौरा किया और पीड़ित ग़रीब जनता की दुखभरी कहानी प्रत्यक्ष रूप से देखी । उन किसानों की कड़ी मेहनत का फल छोटे छोटे ज़मीनदार लूट रहे थे । उन्हें अनेक प्रकार की यातनाएँ झेलनी पड़ रहीं थीं ।

सन १९२१ में रायबरेली के किसानों के नेताओं को गिरफ़्तार किया गया । उनकी रक्षा करनेके लिए किसान हज़ारों की संख्या में आगे आये । जहाँ ये कृषक-नेता बन्दी बनाये जा रहे थे, वहाँ पहुँचने के लिए जवाहरलाल भी निकल पड़े । लेकिन शहर को जोड़ने वाले पुल पर ही पुलिस ने उनको रोक लिया ।

अगर जवाहरलाल वहाँ पर पहुँचते तो वे किसानों को समझाते और उन्हें शांतिपूर्वक भेज देते । लेकिन पुलिस के द्वारा रोके जाने के कारण जनता भड़क उठी और पुलिस के खिलाफ़ विद्रोह कर उठी । इस पर पुलिस ने गोली चलाई और परिणामस्वरूप कई लोग मारे गये ।

उसी समय किसान मज़दूरों ने एक ज़मीनदार का घर लूटा । दरअसल उस ज़मीनदार के कुछ शत्रुओं ने उन्हें उसका घर लूटने के लिए भड़काया था । भोले-भोले मज़दूरों ने उनकी बातों पर विश्वास करके "महात्मा गांधी की जय !" के नारे लगाकर ज़मीनदार का घर लूट लिया ।

यह समाचार पाकर जवाहरलाल को बहुत दुख हुआ । उनको बहुत गुस्सा भी आया । ऐसी घटनाएँ काँग्रेस महासभा को कलंकित कर सकती हैं ऐसा सोचकर जवाहरलाल स्वयं उस गाँव में पहुँचे । सहस्रों की संख्या में गाँववाले उनकी बातें सुननेके लिए इकट्ठा हुए थे ।

जवाहरलाल ने उन्हें समझाकर कहा कि यों किसी ज़मीनदार के घर को लूटना अत्यन्त निंद्य है । वे जोश में आ गये । व्याख्यान देते हुए उन्होंने पूछा - उस ज़मीनदार का घर लूटनेवालों को मैं जानना चाहता हूँ । लूटनेवाले लोग हाथ उठाएँगे ? उस समय वहाँ पर पुलिस के अधिकारी मौजूद थे । फिर भी इसकी परवाह किये बिना चौबीस किसानों ने बेधड़क हाथ उठाये ।

इसका फायदा पुलिस अधिकारियों ने उठाया । हाथ उठानेवालों के साथ उनके रिश्तेदार तथा मित्रों को भी मिलाकर लगभग एक हज़ार लोगों को पुलिसवालों ने गिरफ्तार किया । एक साल तक सुनवाई होती रही और बेचारे बन्दी कई वर्षों तक जेल में बन्द रहे ।

जवाहरलाल को इस बात का अपार दुख हुआ कि उनकी वजह से अनेक भोले-भाले गाँववालों को पुलिस के अत्याचारों का शिकार बनना पड़ा । पर इस घटना के द्वारा उनको भली भाँति मालूम हुआ कि गाँवों के किसान कैसे ईमानदार और हिम्मतवाले हैं ।

किसान - मज़दूरों के बीच ऐसे समारोह अब तक संपन्न नहीं हुए थे । इस लिए अब सरकार को लाचार हो कुछ नये कानून बनाने पड़े । इन कानूनों के द्वारा किसानों को एक फ़ायदा हुआ । खेतों में खपनेवाले मज़दूरों को अब तक ज़मीनदार जैसे अपने हकों से वंचित रखते रहे, वह अब संभव नहीं रहा ।

(क्रमशः)

अद्भुत चीजें

रामापुर गाँव में एक युवक रहा करता था, जिसका नाम था सूरजसिंह । वह बीस साल का हो गया, पर कोई काम-वाम नहीं करना था, बस आवारा-गर्दी किया करता । उसके परिवार में बूढ़े पिता थे, बीमारी से पीड़ित माता थी और शादी के उमर की एक छोटी बहन भी थी ।

एक दिन सूरजसिंह का पिता किसी व्याधि का शिकार हो मर गया । अब घर की सारी ज़िम्मेदारी का बोझ बेचारे सूरजसिंह पर आ पड़ा । पिताजी ने जो कुछ बचा कर रखा था, उसमें ज्यों-त्यों करके दो महीने बीत गये ।

परिवार की ज़िम्मेदारी को संभालना सूरजसिंह को एकदम मुश्किल लगा । एक रात को वह जीवन से विरक्त हो जंगल की ओर भाग निकला ।

सूरजसिंह जंगल में सिर झुकाए चल रहा था । यकायक किसी ने उसको उद्देश्य कर कहा - "कौन हो तुम ? और यों रात में कहाँ जा रहे हो ? "

पासवाले टीले पर बैठी एक पिशाचिनी यह सब कह रही थी । सूरजसिंह ज़रा भी डरा नहीं । वह सीधे पिशाचिनी के पास पहुँचा और अपना सारा हाल उसे कह सुनाया ।

सूरजसिंह की सारी बातें सुन कर पिशाचिनी को दुख हुआ । रोती हुई बोली - "ऐसा हो, तो तुम किस तरह अब ज़िंदा रहोगे बेटा ? "

"हाँ, तुम्हीं बताओ कि अब मैं क्या करूँ ? " सूरज ने पिशाचिनी से पूछा ।

"तुम बड़े किस्मतवाले हो । यहाँ पास में एक श्मशान है । उसमें एक उजड़ा हुआ कुआँ है । मैं तुम्हें दिखा देती हूँ । चलो, जल्दी चलकर उसमें कूद पड़ो । " कहते हुए पिशाचिनी सूरज को लेकर चल पड़ी ।

पिशाचिनी की सलाह सूरजसिंह को उचित ही मालूम हुई । पिशाचिनी के साथ वह उस उजड़े कुएँ के पास पहुँच गया और उसमें कूद पड़ने को तैयार हुआ ।

कौशल इनामदार
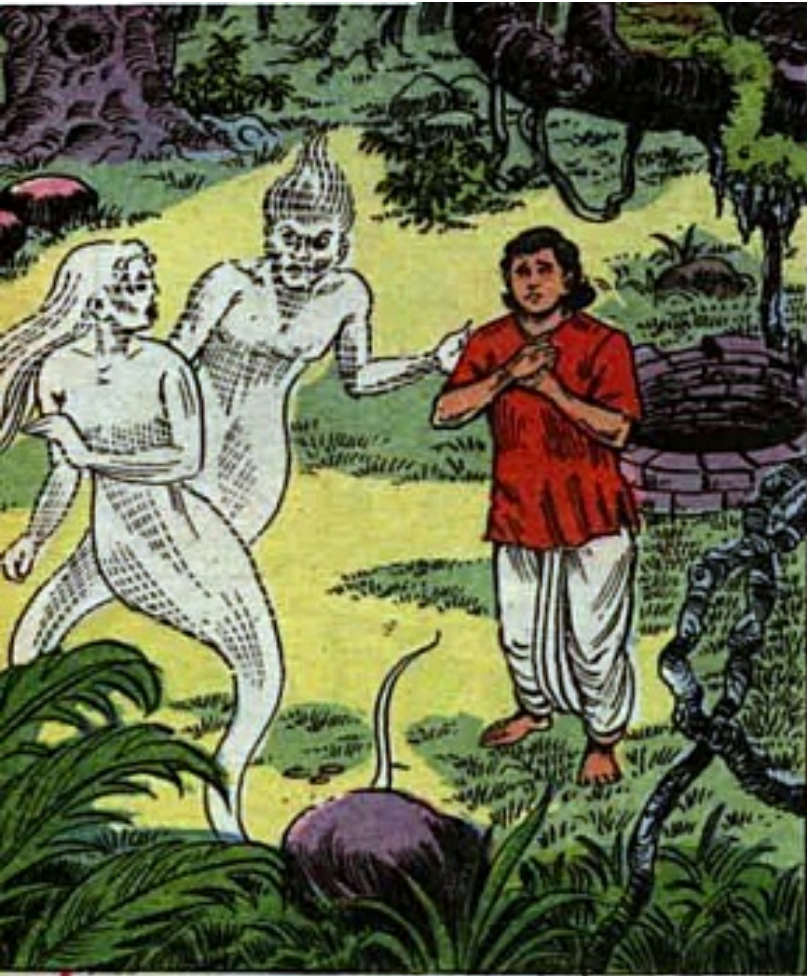
इतने में एक बूढ़ी पिशाचिनी कुएँ से बाहर निकली और उसने पूछा - "कौन है ? इस आधी रात के समय यहाँ पर क्या काम है तुम्हारा ?" सूरजसिंह ने बूढ़ी पिशाचिनी को भी अपना सारा किस्सा सुनाया ।

"बेचारा बड़ी मुसीबतों में फँसा है । उसकी कहानी सुनकर मुझे दुख हुआ और हमदर्दी भी । उसकी मदद करने के लिए उसे यहाँ ले आई हूँ । " पिचाशिनी ने अभिमान के साथ कहा ।

"वाह, बड़ी आई मदद करनेवाली । जा, अब अपना रास्ता नाप । " बूढ़ी पिशाचिनी ने धमकाकर उसे भेज दिया ।

सूरजसिंह ने कहा - "क्यों माँ उस पर ख़फ़ा होती हो ? बेचारी मेरी समस्या हल करने के लिए ही तो मेरे साथ चली आई न ? "

सिर हिलाते हुए बूढ़ी पिशाचिनी ने कहा - "अच्छी बात है । मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें एक स्थान पर ले चलती हूँ । वहाँ का सारा तमाशा देख लो । बाद में तुम जो चाहो, वही करो । " फिर वह सूरजसिंह को श्मशान के ही एक दूसरे हिस्से में ले गई ।

वहाँ एक भग्न समाधि के सामने कुछ पिशाचिनियाँ बैठी हुईं थीं । बूढ़ी पिशाचिनी ने सूरजसिंह से कहा - "देखो, सामने वह कँटीली झाड़ी देख रहे हो न ? उसमें तुम छिप जाओ और बस देखते रहो । " यह सूचना देकर बूढ़ी स्वयं भीड़ की एक ओर जा बैठी ।

कुछ देर बाद उन पिशाचों का नेता बड़े ठाठ से वहाँ पर पहुँच गया और उस भग्त समाधि पर आ बैठा । सभी पिशाच और पिशाचिनियों ने एक साथ प्रसन्नतापूर्वक तालियाँ बजाईं ।

पिशाचों के नेता ने एक बार मुस्कुराते हुए सबकी ओर नज़र फेंकी और फिर कहा - "मेरे प्रिय साथियों, अब देर किस बात के लिए ? इस महीने में तुम लोगों ने जिन अद्भुत वस्तुओं का संग्रह किया है; उनको हमारे सामने पेश करो । तुम्हें मालूम ही है कि वर्ष के अन्त में अत्यन्त अद्भुत वस्तुओं का संग्रह करनेवाला एक विशेष पुरस्कार प्राप्त करेगा । "

दूसरे ही क्षण एक पिशाच एक खाली टोकरी लेकर आया और टोकरी को समाधि पर लुढ़काकर बोला - "सब्जी ! तरकारियाँ !! " और फिर उसने टोकरी पर तीन बार छड़ी से

मारा । आश्चर्य की बात कि जैसे ही टोकरी उठाई, उसके नीचे तरह-तरह की तरकारियों का ढेर पाया गया ।

"शाबाश ! शाबाश ! " कह कर सभी पिशाचों ने ज़ोर-ज़ोर से तालियाँ पीटीं ।

सूरजसिंह ने जब उस दृश्य को देखा, तब उसे लगा, क्या ही अच्छा हो कि वह टोकरी उसके पास आ जाए ।

अब दूसरा एक पिशाच आगे आया । उसके हाथ में एक बर्तन था । उसने उसे समाधि पर औंधे मुँह लुढ़काया और वह ज़ोर से चिल्लाया - "मिठाइयाँ ! मिष्टान्न !! " फिर उसने छड़ी से बर्तन पर तीन बार प्रहार किया । जब उसने बर्तन उठाया तो उसके नीचे सुगंध फैलानावाले व्यंजन और अनेक प्रकार की मिठाइयाँ पाई गईं ।

अब सूरजसिंह को लगा कि उस टोकरी की अपेक्षा बर्तन ही कहीं अधिक फ़ायदेमंद है ।

तीसरे पिशाच ने एक मिट्टी के घड़े को समाधि पर रखा और उसने कहा - "मुझे चाहिए दूध ! गाढ़ा, स्वादिष्ट और शुद्ध दूध !!" उसने छड़ी को घड़े की चारों तरफ घुमाया ।

तुरन्त घड़ा गाढ़े दूध से भर गया । सूरज को लगा कि बर्तन की अपेक्षा इस घड़े से अधिक धन कमाया जा सकता है ।

अन्त में पिशाचों के नेता ने अपने सहकारियों को बढ़ावा देते हुए कहा - "मुझे यह देखकर अत्यन्त आनन्द हो रहा है कि मेरे अनुचर ऐसी अद्भुत वस्तुओं का संग्रह कर रहे

हैं । मैं सब को धन्यवाद देता हूँ । अब हम लोग आगामी अमावास्या के दिन यहाँ पर इकट्ठा होंगे । पिछली बार कुछ चीज़ों को हमने जहाँ छिपाया है, वहीं पर ये तीन अद्भुत चीज़ें भी रख देंगे । " फिर उसने उन चीज़ों को निकटवर्ती वट-वृक्ष के खोखले में रख दिया ।

इसके बाद सभी पिशाच हो-हल्ला मचाते हुए वहाँ से चल दिए । अब सूरजसिंह बरगद के पास पहुँचा और उसके खोखले से पहले एक मिट्टी का घड़ा निकाला, उसके नीचे उसे एक बर्तन दिखाई दिया, उसको भी उसने बाहर निकाला । इसके बाद क्रमशः टोकरी, बंशी, जूते, सूप, छड़ी तथा एक घंटा आदि चीज़ें बाहर निकाली गईं । वह सोचने लगा कि इन सारी चीज़ों को कैसे एक साथ उठा ले जाए ।

तभी उसे खोखले के नीचे एक बोरा पड़ा दिखाई दिया ।

सूरज ने बोरा अपने हाथ में लेकर उन सभी अद्‌भुत वस्तुओं को उसमें भर दिया । फिर एक जंगली बेल से बोरे का मुँह बाँध दिया । वह बोरे को उठा कर कंधे पर रख ही रहा था कि आश्चर्य...

अद्‌भुत वस्तुओं से भरा वह बोरा यकायक अदृश्य हो गया । सूरज पागल की तरह चारों तरफ देख रहा था कि बूढ़ी पिशाचिनी वहाँ पर आ धमकी और उसने सूरज को समझाया - "बेटा, मैंने सब कुछ देख लिया है । उजड़े कुएँ के पास जब पहली बार मैंने तुम्हें देखा, तब तुम्हारे अन्दर निराशा पिशाच घर किये हुए था । पर मैंने तुममें आशा की नई जान फूँककर तुम्हें आत्महत्या से बचाने की कोशिश की । और तुमको यहाँ पर ले आई । यहाँ निराशा के पिशाच ने तुमको छोड़ा ज़रूर, पर एक नये पिशाच ने तुम पर अधिकार जमाया - आशा या प्रलोभन ! यही कारण है कि प्रलोभन में पड़कर सारी अद्‌भुत वस्तुओं को निजी संपत्ति बनाने का मोह तुम्हारे मन में पैदा हुआ । यों इन वस्तुओं को तुम अपना नहीं बना सकोगे । समझे ?"

सूरज ने पूछा - "हाँ बूढ़ी माँ, तुमने जो कुछ कहा, सब सच है । लेकिन यह बताओ कि अब मुझे क्या करना होगा ?"

"बेटा, मानव में दृढ लगन हो तो वह कई अद्‌भुत काम कर सकता है । क्या तुम सब्जी तरकारी नहीं पैदा कर सकते ? मिठाइयों का व्यापार नहीं कर सकोगे ? भैंसें रखकर उनका दूध बेचकर अपने परिवार का पाल-पोस नहीं कर सकोगे ? तुम्हीं अपने ढंग से सोचो कि अपने जीवन-यापन के लिए कौनसा मार्ग अधिक सुविधाजनक है ?" इतना मार्गदर्शन कर बूढ़ी पिशाचिनी वहाँ से ग़ायब हो गई ।

पिशाचिनी की बातों में छिपे रहस्य को सूरजसिंह ने समझ लिया और नये उत्साह से नई ज़िंदगी बसर करने के लिए अपने घर की ओर निकल पड़ा ।

श्री कृष्ण और इन्द्र परस्पर चर्चा करते रहे और बाद में शचीदेवी तथा सत्यभामा को साथ लिये अदिति से मिलने गये । सब ने अदिति को प्रणाम किया । इन्द्र ने अदिति को उसके कुण्डल वापस दे दिये, फिर श्रीकृष्ण ने नरकासुर को कैसे पराजित किया उसका वर्णन सब को विस्तृत रूप में कथन किया ।

अदिति ने श्रीकृष्ण की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए उसको अनेक आशीर्वाद दिये और प्रेमपूर्वक कहा - "वत्स, तुमने अपने असामान्य बाहु-बल से मेरे सारे कष्ट दूर कर दिये । तुम्हारा जन्म अपूर्व है । तुम ने अब तक कई राक्षसों का संहार किया । दुष्टों का निर्दालन करके पीडितों को सुखी बनाया । शरणागतों का दुख दूर किया । इन्द्र के समान तुम भी देवताओं की सेवा करते रहो । इस पृथ्वी का कोई भी नराधम तुम्हें पराजित नहीं कर सकेगा । सर्वत्र यह मान्यता है कि नारियों में सत्यभामा की समता करनेवाली स्त्री दुर्लभ है । तुम जब तक मानव के अवतार में रहोगे, तब तक सत्यभामा का यौवन बना रहेगा । यही मेरा तुम्हारे लिए आशीर्वाद है ।"

फिर अदिति और इन्द्र से विदा लेकर श्रीकृष्ण गरुड़ पर सवार हुए । सत्यभामा के साथ नंदनवन आदि देवलोक के उद्यानों में भ्रमण किया । वहाँ कल्प-वृक्षों के दर्शन किये । उनके फूलों पर भँवरे मंडरा रहे थे । उनकी शाखाओं पर झूले लगाये गये थे, जिन पर देव-कन्याएँ झूल रहीं थीं । उन्होंने रंग-बिरंगे फूलों से अपनी देह-लताओं को अलंकृत किया था । बीच बीच में ये कन्याएँ

२१. पारिजात का अपहरण

गाने भी गा रहीं थीं । सब दूर भ्रमण करके लौटे हुए सिद्ध-मिथुन उन वृक्षों की शीतल छाया में आराम कर रहे थे । इन कल्प-वृक्षों के बीच श्रीकृष्ण ने एक पारिजात देखा । उसकी भीनी भीनी खुशबू चित्तवृत्ति को उल्हासित करती थी । उसके पुष्पों की सुंदरता को देख नेत्र संतुष्ट हो जाते । देवतागण उस वृक्ष की पूजा करते थे और शची को वह प्राणों से भी प्रिय था । उसका यश तीनों लोकों में विख्यात था । उसके पास जानेवालों को जाति-स्मृति हो जाती ।

पारिजात के फूलों की भीनी सुगंध से सत्यभामा अत्यन्त प्रसन्न हुई, उसको मालूम हुआ कि देवता-नारियों को पारिजात वृक्ष अत्यन्त प्रिय है । वह एक विशेष आनन्द का अनुभव करने लगी । उसको लगा यह पारिजात वृक्ष द्वारका में अपने उद्यान में हो तो कितना अच्छा होगा । वह आसपास के सारे वातावरण को आनन्दमय बना देगा । उसने श्रीकृष्ण को निवेदन किया कि वह वृक्ष उसे ला दें ।

सत्यभामा की इच्छा जानकर श्रीकृष्ण ने तुरन्त पारिजात वृक्ष को जड़ सहित उखाड़ लिया और उसे गरुड़ की पीठ पर रख दिया और फिर वहाँ से चल पड़े । इस पर देव-लोक के उद्यानों की रक्षा करनेवाले पहरेदारों ने श्रीकृष्ण से युद्ध प्रारंभ किया । उद्यान के उत्तमोत्तम वृक्षों की रक्षा करना उनका उत्तरदायित्व था । पारिजात तो सर्वोत्तम वृक्ष ठहरा । उसके संरक्षण में ज़रा भी असावधानी होती तो वह उनकी हिमालय जैसी भूल होती । श्रीकृष्ण ने बाण चलाकर उन्हें तत्काल पराजित किया । थोड़ी देर में इन्द्र को यह सब समाचार मालूम हुआ ।

सभी लोग जानते ही हैं कि श्रीकृष्ण तीनों लोकों के संरक्षक हैं । अगर वे पारिजात ले जाते हैं तो उन्हें रोकना नहीं चाहिए । फिर भी उस समय इन्द्र अपने ऊपर नियंत्रण नहीं रख सका । अन्य देवताओं के साथ आकर उसने श्रीकृष्ण को रोका और उन पर वज्रायुध का प्रहार करनेको था । श्रीकृष्ण ने उसको बीच में ही रोक दिया । अब इन्द्र कुछ कर न सका । उसने स्वीकार किया जब तक श्रीकृष्ण जीवित रहेंगे, तब तक पारिजात पृथ्वी पर ही

रहेगा । इन्द्र ने सोचा, अब तक पारिजात ने देव-लोक की शोभा बढ़ाई, इसके बाद वह द्वारका में रहे तो मुझे आपत्ति करना उचित नहीं । उसने अपने मोह को रोका और स्वीकार किया कि श्रीकृष्ण पारिजात को पृथ्वी पर ले जाएँ । फिर इन्द्र वहाँ से चला गया और श्रीकृष्ण द्वारका के लिए चल पड़े ।

गरूड़ ने पारिजात सहित सत्यभामा तथा श्रीकृष्ण को द्वारका के राजभवन की छत पर उतार दिया । श्रीकृष्ण ने अपना पांचजन्य बजाकर अपने आगमन का समाचार सारे नगरवासियों को दिया । सब लोग दौड़ते हुए उनके पास आ पहुँचे । श्रीकृष्ण ने सभी बुजुर्गों को प्रणाम किया और छोटों को आलिंगन देकर उनका कुशल पूछा । श्रीकृष्ण के दर्शन करके सब को अतीव प्रसन्नता हुई

प्रद्युम्न ने आकर पारिजात वृक्ष को अंतःपुर में पहुँचा दिया । जो भी उसके पास गया, उसने आश्चर्य के साथ अपने पूर्व-जन्म का ज्ञान पाया । पारिजात की यह विशेषता देखकर सब को बड़ा विस्मय हुआ । फिर उस वृक्ष को यथोचित स्थान पर रोप दिया गया । पारिजात द्वारका में सभी स्त्रियों में बहुत प्रिय हुआ । रोज़ सुबह द्वारकावासी नारियाँ पारिजात के आसपास की भूमि को साफ करती, फिर उसमें पानी देती । बाद में पारिजात की पूजा कर कुछ फूलों को प्रसाद-स्वरूप ग्रहण करती । पारिजात के फूलों को अपने पास रखकर वे अत्यन्त उल्हासित हो उठती । पारिजात की सेवा के लिए नारियों में होड़-सी

लगी रहती ।

नरकासुर के कारागार से मुक्त होकर जो नारियाँ पालकियों में द्वारका पहुँच गई, उन सब के साथ श्रीकृष्ण ने स्वयं विवाह कर लिया ।

इसके बाद श्रीकृष्ण ने गरुड़ का यथोचित सन्मान किया और उसे देवलोक की ओर प्रस्थान करने को अनुमति दी । गरुड़ ने श्रीकृष्ण को वचन दिया कि वे जब कभी उसका स्मरण करेंगे, तब तुरन्त वह उनकी सेवा में उपस्थित हो जाएगा । फिर गरुड़ ने देव-लोक की ओर प्रस्थान किया ।

गरुड़ के चले जाने के बाद श्रीकृष्ण ने सभी द्वारकावासियों को बुलाया और जिन वस्तुओं को वे अपने साथ लाये थे, उनका वितरण किया । उग्रसेन, उनकी पत्नी तथा अन्य लोगों को

भेंट-वस्तुएँ देने के बाद जो बचीं उनको राजकोश में संमिलित कराया गया ।

सत्याभामा पारिजात के फूलों से प्रति दिन अपने को अलंकृत करने लगी । अपनी सौतों में भी वह इन फूलों का वितरण करती । लेकिन उधर देवलोक में पारिजात की अनुपस्थिति इन्द्र को बहुत खटकती । वह दीनतापूर्वक शची की ओर देखता रहता । पारिजात के अभाव में कुछ दिन शची उदास-सी रहती । फिर धीरे धीरे उसकी व्यथा की तीव्रता कम होती गई ।

एक बार हस्तिनापुर में दुर्योधन ने एक यज्ञ प्रारंभ किया । उसमें संमिलित होने के लिए पृथ्वी के समस्त राजाओं को निमंत्रित किया गया था । यज्ञ की समाप्ति पर कई राजाओं को श्रीकृष्ण का वैभव देखने की इच्छा हुई । उन्होंने श्रीकृष्ण को एक दूत द्वारा संदेश भेजा कि वे उनके और द्वारका के दर्शन करना चाहते हैं । श्रीकृष्ण ने प्रत्युत्तर में उनको सप्रेम निमंत्रण दिया कि वे अवश्य पधारें । निमंत्रण पाकर धृतराष्ट्र के सौ पुत्र, उनके सामन्त तथा पांडव भी अठारह अक्षौहिणी सेना समेत निकले और रैवतक पर्वत पर उन्होंने डेरा डाला ।

श्रीकृष्ण अपने अतिथियों के स्वागत के लिए बलराम, सात्यकि, प्रद्युम्न आदि के साथ अपनी विशाल सेना लेकर आ पहुँचे । उन्होंने सब का यथोचित स्वागत किया, वस्त्रों का वितरण किया और फिर निवेदन किया - "मैं तथा मेरे ये सारे बांधव आप लोगों के अपने ही हैं । आपकी जो भी इच्छा हो, बिना संकोच के माँग लीजिए । हम उन सभी वस्तुओं का प्रबंध करेंगे । द्वारका में किसी चीज़ का अभाव नहीं है । आपको जो चाहिए, उसके बारेमें आदेश दीजिए । आपको हर मनचाही वस्तु मिल जाएगी । सभी द्वारकावासी आपकी सेवा के लिए तत्पर रहेंगे । " सब लोग कुछ दिन श्रीकृष्ण के सहवास में रहकर अपने अपने स्थान चले गये ।

एक बार अर्जुन युधिष्ठिर की अनुमति पाकर श्रीकृष्ण से मिलने के लिए द्वारका पहुँचा और उसने कुछ दिन श्रीकृष्ण का आतिथ्य ग्रहण किया । उन्हीं दिनों में श्रीकृष्ण ने एक यज्ञ प्रारंभ किया । यज्ञ में एक देहाती ब्राह्मण आ पहुँचा और यज्ञ-कार्य में निमग्न श्रीकृष्ण के सामने खड़ा हो गया । बड़ी दीनता के साथ

उसने श्रीकृष्ण से निवेदन किया - "महानुभाव, कृपया मेरी प्रार्थना सुनेंगे ? मेरी पत्नी के प्रसव के तुरन्त पश्चात् कोई उन शिशुओं का अपहरण कर रहा है । अब तक तीन बार ऐसा हुआ है । अब चौथी बार मेरी पत्नी गर्भवती है । प्रसव का समय करीब है । मैं चाहता हूँ कि जो तीन बार हुआ वह चौथी बार न हो । यह मेरा क्या दुर्भाग्य है कुछ समझ में नहीं आता । मैंने कई ज्ञानियों से पूछा । कोई मेरी कुछ मदद न कर सके । इस लिए अब मैं आपकी शरण में आया हूँ । अब आप ही हमारी रक्षा कर सकते हैं । "

श्रीकृष्ण ने कहा -"कोई भी रक्षा की कामना से मेरी शरण में आता है तो उसकी सहायता करना मेरा कर्तव्य है । पर इस समय मैं अपने यज्ञ-कार्य में व्यस्त हूँ । क्या करूँ, कुछ समझ में नहीं आता । "

अर्जुन दोनों का वार्तालाप सुन रहा था । उसने दखल दी - "आप मुझे क्यों नहीं भेजते ? मैं इस ब्राह्मण के साथ जाकर इसकी विपदा को दूर करूँगा और आपको संतोष दे दूँगा । "

कृष्ण ने मुसकुराते हुए पूछा -"तुम्हें लगता है यह कार्य तुम संपन्न कर सकोगे ? कोशिश करना चाहो तो मुझे कुछ आपत्ति नहीं है । "

अर्जुन ने कुछ अपमान का अनुभव किया और सिर झुका लिया । तब श्रीकृष्ण ने कहा -"एक काम करो । अकेले मत जाना । बलराम, प्रद्युम्न, सात्यकी और कुछ यादव-वीरों तथा सेना को भी साथ लेते जाओ । "

श्रीकृष्ण के सुझाव के अनुसार अर्जुन कई योद्धा तथा भारी सेना के साथ रथ पर सवार हो ब्राह्मण के गाँव पहुँचा ।

इतने में सियारों की चिल्लाहट सुनाई दी । आसमान में सूर्य का प्रकाश धीमा पड़ गया । ऐसा लगा कि संध्या-समय निकट आ रहा है । एक भयंकर ध्वनि के साथ पृथ्वी पर उल्कापात हुआ । और उसी समय ब्राह्मणी की प्रसव-पीड़ा शुरू हुई । ब्राह्मण ने आकर यह समाचार दिया तो सभी योद्धा धनुष-बाण लिये प्रसूति-ग्रह के समीप आ पहुँचे ।

आधी रात के समय ब्राह्मणी प्रसूत हुई । शिशु के रोने की आवाज़ सुनाई दी । और इतने में औरतें चिल्ला उठीं - "ओह ! चला गया, यह भी चला गया !" नारियों के आर्त नाद के साथ शिशु के रोने की ध्वनि

आसममान की ओर से सुनाई दी ।

अर्जुन तथा अन्य योद्धाओं ने आकाश को बाणों से पाट दिया । पर आसमान में कुछ नहीं दिखाई दिया । सभी बाण व्यर्थ-से गये । विस्मय में सब खड़े ही रह गये ।

बुजुर्गों ने अर्जुन तथा अन्य योध्दाओं की निंदा की । वह ब्राह्मण अत्यन्त क्रोधित होकर बोला - "तुमने महान् पराक्रमी वीर की भाँति श्रीकृष्ण के सामने डींग हांकी थी और यह कार्यभार अपने सिर पर लिया था । जो कार्य केवल श्रीकृष्ण ही कर सकते हैं, उसे तुम कैसे कर सकते हो ? श्रीकृष्ण के साथ तुमने अपनी तुलना कैसे की ? भविष्य में ऐसा दंभ कभी न करना । रक्षा करनेका आश्वासन देकर उसे निभा न सके । इस प्रकार धर्म की जो हानि हुई उसका पाप तुम्हें लगेगा । उसके फल को तुम्हें भोगना पड़ेगा । तुम्हारा गांडीव व्यर्थ है, तुम्हारा पराक्रम वृथा है । अब चुपचाप अपना रास्ता नापो । जाओ । "

इसके बाद ब्राह्मण पुनः श्रीकृष्ण से मिलने के लिए निकला । उसके पीछे अर्जुन और अन्य योध्दा भी चल पड़े । लज्जा के मारे सिर झुकाकर आँखों में आँसू भरकर सभी श्रीकृष्ण के सामने खड़े हो गये । सांत्वना देते हुए श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा - "इतनी-सी बात के लिए तुम चिंता क्यों करते हो ? तुम्हारी असफलता का एक कारण है । ठीक समय पर मैं उसे तुम्हें समझाऊँगा । " अब कृष्ण ने दारुक को बुलाया और उसे रथ तैयार करनेका आदेश दिया ।

दारुक ने कृष्ण के रथ में शैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प तथा वलाहाकल नामक चार घोड़ों को जोत लिया, फिर उस पर गरुड़-ध्वज को फहराया । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपना सारथी बनाया और रथ पर सवार हो उत्तर दिशा की ओर चल निकले । जंगल, पहाड़ और नदियों को पार कर रथ समुद्र के तट पर पहुँच गया ।

मानव रूप धर कर समुद्र प्रत्यक्ष उपस्थित हुआ, श्रीकृष्ण को अर्घ्य प्रदान किया और फिर पूछा - "महाशय, मेरे लिए आपका क्या आदेश है ?"

"और कुछ नहीं, मेरे रथ के लिए रास्ता बना दो । "

समुद्र ने नम्रता के साथ कहा - "भगवान्,

सेवा का ऐसा अवसर पाकर मैं कृतकृत्य हो गया । मैं आपका कृतज्ञ हूँ । आप ही ने तो मुझे अलंघ्य और अपार स्वरूप दे दिया । "

श्रीकृष्ण के आदेश के अनुसार समुद्र ने रास्ता बना दिया । श्रीकृष्ण का रथ कुरु-भूमियों को पार कर गंधमादन पर्वत की ओर बढ़ने लगा । अब छः पर्वत श्रीकृष्ण के सामने आ उपस्थित हुए - जयंत, वैजयंत, नीलश्वेत, इन्द्रकूट और कैलास । विभिन्न रंगों की धातुओं से उनके देह अलंकृत थे । उन्होंने विनम्र हो पूछा - "भगवन्, क्या आदेश है हमारे लिए? "

श्रीकृष्ण ने कहा -"और कुछ नहीं, हमें आगे जाने के लिए मार्ग चाहिए । "

पर्वतों ने झुक कर श्रीकृष्ण के रथ के लिए तुरन्त मार्ग बना दिया । बादलों के बीच प्रयाण करनेवाले सूर्य की भाँति श्रीकृष्ण का रथ पर्वतों के बीच से दूर निकल गया । अब अत्र-तत्र अंधकार छा गया । इसे देख अर्जुन डर गया । घोड़े ठिठक गये । चारों तरफ शिला के समान घनीभूत अंधकार को श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से ध्वस्त कर दिया । अर्जुन ने अपना रथ आगे बढ़ाया ।

बहुत दूर निकल जाने के बाद एक स्थान पर ऐसी कांति एकत्रित हुई दिखाई दी जैसे कोटि सूर्य एक हो गये हों । कृष्ण अपने रथ से नीचे उतरे और उन्होंने उस घनीभूत कांति में प्रवेश किया ।

अर्जुन तथा ब्राह्मण इस विचार से डरने लगे - "यह अपूर्व कांति कैसी ? श्रीकृष्ण अकेले ही इसके भीतर क्यों चले गये । अब आगे चल कर क्या होगा ?" आश्चर्य, इतने में श्रीकृष्ण उस कांति के बीच में से वापस बाहर आ गये । उनके साथ तीन ब्राह्मण-कुमार भी थे । श्रीकृष्ण के हाथों में एक नवजात शिशु भी था ।

श्रीकृष्ण ने उन चारों को ब्राह्मण के हाथ सौंप दिया । ब्राह्मण के आनन्द की और अर्जुन के आश्चर्य की कोई सीमा न रही ।

श्रीकृष्ण का रथ जिस मार्ग से गया था, उसी मार्ग से घर की तरफ लौटा । श्रीकृष्ण ने ब्राह्मण को अनेक उपहार देकर उसे बिदा किया । फिर उन्होंने अपने यज्ञ की पूर्ति की ।

पुलिन्द नामक राज्य पर राजा पुरंधर राज्य करते थे । उनके दरबार में चार कपटी पंडित थे । किसी न किसी बहाने वे राजा से दान प्राप्त करते और आराम से अपने दिन गुज़ारते थे ।

एक बार उनके मन में एक अजब इच्छा जागृत हुई । राजा से भारी पैमाने पर दान के रूप में सोना प्राप्त करें । इस उद्देश्य से उन्होंने एक योजना बनाई ।

एक दिन राजा का दरबार लगा हुआ था । दरबार में उपस्थित इन पंडितों ने राजा से निवेदन किया – "महाराज, पिछली रात हमने आपकी जन्म-कुंडली की जाँच की । इन दिनों आपके ग्रह अनुकूल नहीं हैं । शीघ्र ही आपके दोनों हाथ बेकाम होने का खतरा है । और धीरे धीरे आप के अन्य अवयवों की शक्तियाँ भी शीघ्र गति से कम होंगी । सब से पहले आँखों के चले जाने का डर है । "

राजा घबरा गया । उसने पूछा – "क्या इस खतरे से बचने का कोई उपाय है ?"

पंडितों ने सुझाया – "क्यों नहीं, महाराज ? एक शुभ गुरुवार के दिन आप सोने की कुल्हाड़ी हाथ में लीजिए । और तब तक आप पेड़ की लकड़ी काटते रहिए, जब तक आपके हाथों में दर्द न हो । फिर उस कुल्हाड़ी को उत्तम पंडितों में दान कर दीजिए । इससे प्रतिकूल ग्रहों की शांति होगी और आप आनेवाले खतरे से बच जाएँगे । "

राजा ने सभा का विसर्जन किया और उत्तम स्वर्णकारों को निमंत्रित किया । ठोस सोने की एक बढ़िया कुल्हाड़ी बनाने का काम उन्हें सौंपा गया ।

पंडितों ने एक गुरुवार के दिन शुभ मुहूर्त निश्चित किया । उस समय मंगल वाद्यों के साथ राजा जुलूस में शाही उद्यान में पहुँचा । सरोवर के किनारे एक ऊँचे पेड़ में कुछ सूखी-

विश्वास शर्मा

शाखाएँ नज़र आई । राजा पेड पर चढ़ा और कुछ सूखी लकड़ियों को काटने लगा । अभ्यास न होने के कारण थोड़ी ही देर में राजा के हाथ काँप उठे और उसके हाथों से कुल्हाड़ी सरोवर के पानी में गिर पड़ी ।

तुरन्त दो-तीन कुशल तैराक़ सरोवर में कूदने को तैयार हुए । उसी समय थोड़ी दूर पर कमल-पत्रों के बीच से देह पर आड़ी धारों वाली एक आकृति ऊपर उठी और उसने अपने हाथ की एक लोहे की कुल्हाड़ी किनारे पर फेंक दी ।

उस आकृति को देख वहाँ पर जमा हुए लोग घबरा गये । उन्होंने डरते डरते पूछा - "कौन हो तुम ?"

उस आकृति ने जवाब दिया - "मेरा नाम रापा..." और फिर वह आकृति पानी में डूब गई ।

सोने की कुल्हाड़ी को लोहे की कुल्हाड़ी में परिवर्तित करनेकी उसकी शक्ति को देखकर राजा को तथा अन्य उपस्थित जनों को बड़ा आश्चर्य लगा ।

इसके बाद राजा अपने महल को लौट आया । राजा ने मंत्री और पंडितों की एक बैठक बुलाई और सब को समझाया - "तुम लोग शीघ्र ही उस राजा का पता लगाओ । अगर उसका पता नहीं चला तो वह उद्दण्ड हो हमारे खज़ाने में रखे सोने को लोहे में बदल देगा और हमारा सर्वनाश करेगा । "

इस घटना के दो दिन बाद चारों पंडित राजा के पास आए और उन्होंने निवेदन किया -"महाराज, इधर दो दिनों में हमने बडे परिश्रम के साथ अनेक ग्रन्थों का अनुशीलन किया । पता चला कि उस राक्षस का नाम रापा नहीं है, वह है रापाश ! देव और दानवों के बीच जब समुद्र-मंथन हुआ, तब से उसका ज़िक्र पाया जाता है । त्रेता युग में भी एक जगह रापाश दर्शन देता है । वह न केवल छल-कपट करनेवाला है, अत्यन्त अत्याचारी भी है । " पंडितों की बातें सुनकर राजा बहुत घबरा गया और उसने विविध देशों से मशहूर मांत्रिकों को निमंत्रित किया । उसने अपने किले और ख़ज़ाने की चारों तरफ पहरे का पक्का बंदोबस्त किया । पूजा-अर्चना की और नगरवासियों में तावीज बँधवाये । देश के कोने-कोने में ढिंढ़ोरा पिटवाया कि जो रापाश का वध करेगा उसे भारी इनाम दिया जाएगा ।

दूसरे दिन राजा का एक [illegible] राजा के
विश्राम के समय उसके पास आया और

और सूखी डाल को काटने लगा । तब उसने दूर से मंगल वाद्यों के साथ राजा को आते देखा । उसने सोचा कि राजा अगर उसको इस हालत में देखेगा तो उसे सज़ा देगा । इसी डर से वह सरोवर में कूद पड़ा । चूँकि वह एक कुशल तैराक़ था, कमल पत्रों की ओट में छिप गया ।

इतने में आप वहाँ पर आ गये । पेड़ की डाल काटते समय आपने अपनी सोने की कुल्हाड़ी को सरोवर में गिरा दिया । यह देख आपके साथ आये लोगं सोने की कुल्हाड़ी के लिए पानी में उतरने को हुए । रंगनाथ ने सोचा कि अब उनके द्वारा उसका रहस्य खुल जाएगा । पर उसके मन में यह भी आया कि उसके बदन पर पहले से कहीं अधिक कीचड़ लगा है, जिससे लोग उसे पहचान नहीं पाएँगे । यों सोचकर वह पानी के ऊपर आया और अपने हाथ की लोहे की कुल्हाड़ी को उसने किनारे की ओर फेंक दिया । उस हालत में जिन लोगों ने उसे अपना नाम-धाम पूछा, उन्हें वह बताना चाहता था कि वह राजा के रसोईघर का नौकर है । पर घबराहट की वजह वह बोल गया - रापा... ! फिर वह पानी में डूबकर तैरते हुए दूसरे किनारे पहुँचा । ''

सारी कहानी सुनकर राजा ने एक ठहाका मार कर कहा - ''अरे रंगनाथ, पंडितों ने बताया कि त्रेता युग का भयंकर राक्षस रापाश तुम्हीं हो । अब तो स्पष्ट हो गया कि सोने की कुल्हाड़ी को कोई राक्षस नहीं उठा ले गया । सरोवर में ही उसकी खोज करनी चाहिए । ''

''महाराज, अब उसकी ज़रूरत नहीं है । उसी रात रंगनाथ गुप्त रूप से सरोवर में उतरा और सोने की कुल्हाड़ी ढूँढ़ ली । उसने उसे मेरे हवाले कर दिया । '' इतना निवेदन कर रसोइया रसोई-घर में गया और सोने की कुल्हाड़ी राजा की सेवा में पेश की ।

राजा को यह सब सुनकर बहुत खुशी हुई । उसने अपने गले का हीरों का हार रंगनाथ को भेंट-स्वरूप दे दिया । फिर स्वार्थवश राजा को ग़लत राह पर ले जाकर उन्हें दग़ा देने की बात सोचनेवाले चारों कपटी पंडितों को कड़ी सज़ा दी ।

मछलियों की फसल

कैरो नगर में एक मशहूर विदूषक रहा करता था जिसका नाम था गोहो । एक बार उसने बागवानी करने की सोची । उसने अपने घर का सारा पिछवाड़ा खोदकर तरह तरह के फूलों के पौधे लगाये । उनके आवाल बनाकर बड़े प्यार और लगन से उन्हें पालने लगा ।

गोहो के मन में बागवानी के प्रति जो नई अभिरुचि पैदा हुई, उसे देख उसके कई मित्रों ने उसको क़िस्म-क़िस्म की सलाहें दीं । कुछ मित्रों ने यथासंभव मदद भी की । परिणाम-स्वरूप गोहो का बंजर पिछवाड़ा एक खूबसूरत बगीचा बन गया । इसमें तरह तरह के फूल देखकर आनेवाले संतुष्ट हो जाते ।

एक दिन एक अमीर आदमी गोहो से मिलने आया । उस समय गोहो अपने उद्यान में घास निराने में व्यस्त था । उस अमीर ने कुछ मज़ाकन गोहो से कहा - "भाई इधर तुम बहुत अच्छे माली हो गये हो ! लेकिन यहाँ नये क़िस्म के पौधे न के बराबर हैं । "

गोहो ने कहा - देखिए, मुझे जो जो बीज मिलते हैं, उन्हें मैं बो देता हूँ । अब नये पौधों के बीज न मिले तो मैं भला क्या करूँ ? आप कुछ नये बीज देंगे ?"

"तभी तो मैंने पूछा । नये बीज मैं दे सकता हूँ, पर मुझे संदेह है शायद तुम उन्हें उगा न सकोगे । " अमीर ने ठाठ से कहा ।

"आप संदेह न करें । मैं सब प्रकार के बीजों को उगा सकता हूँ । " गोहो ने कुछ अभिमान से कहा ।

अमीर व्यक्ति ने आश्वासन दिया - "तब तो कल सबेरे अपने नौकर के हाथ मैं बीज तुम्हारे पास भेज दूँगा । "

दूसरे दिन सबेरे अमीर आदमी का नौकर एक पोटली लेकर आया, उसे गोहो के हाथ में रख कर बोला - "हमारे मालिक ने ये बीज

मिस्र की एक लोक-कथा

आपको देने के लिए कहा है । इन्हें बड़ी सावधानी से उगाने के लिए कहा है । ''

नौकर ने और कहा –"जब पौधे बढ़ने लगेंगे तो एक बार वे स्वयं आकर देखना चाहेंगे । ''

माली लोगों को अगर कोई नये बीज मिलते हैं, तो उनमें से एक दाना मुँह में डाल कर दातों से उसे कुतर कर उसका स्वाद देखने की आदत होती है । गोहो ने भी ऐसा ही किया और वह समझ गया कि अमीर आदमी ने उसके साथ दगाबाज़ी की है ।

अमीर ने जो पोटली भेजी थी, वे बीज न थे; बल्कि मछली के सुखाये गये अण्डे थे । गोहो का मज़ाक उड़ाने के लिए अमीर ने उन्हें बोने के लिए भेजा था । गोहो ने मन-ही-मन निश्चय किया कि अब अमीर व्यक्ति को यथासमय खासा अच्छा पाठ पढ़ाएगा ।

इस तरह दो हफ़्ते बीत गये । एक दिन बाज़ार में गोहो को अमीर आदमी के दर्शन हुए । देखते ही अमीर ने पूछा – "कहो भाई, तुम्हारे गुलाब खूब खिल रहे हैं न ?"

गोहो ने जवाब दिया – "आप की कृपा से इस बार इतने फूल लगे हैं कि पत्ते तक दिखाई नहीं देते । ''

"और हाँ, मैं भूल ही गया, मैंने जो बीज भेजे थे उन्हें बो दिया न ?"अमीर ने मुस्कुराते हुए पूछा ।

"हाँ, हाँ ! मैंने तो उसी दिन उन्हें बो दिया । '' गोहो ने जवाब दिया ।

अमीर आदमी अंदर ही अंदर अपनी हँसी को रोकते हुए बोला – "शायद उनमें अंकुर नहीं फूटा होगा ! मेरे दामाद ने कहा भी था कि उन्हें उगाना साधारण माली के बस की बात नहीं !"

"मैं साधारण माली थोड़े ही हूँ ? उचित प्रकार का आवाल बना दे, आवश्यक खाद डालकर बीज बो दें और सावधानी से उनकी रक्षा करें, तो सब प्रकार के बीज़ों में अंकुर निकल ही आने चाहिए । आपने जो बीज भेजे थे, उनमें अभी अभी अंकुर फूट रहे हैं । उन्हें न दीठ लगे, न धूप, इसलिए मैंने उन पर उपले ढँक दिये हैं । आप कल सबेरे मेरे घर पधारिए तो खुद देख सकते हैं । '' गोहो ने जवाब दिया ।

अमीर आदमी का चेहरा पीला पड़ गया । उसने कहा – "अच्छी बात है । तो मैं कल

अवश्य आऊँगा । ''

अब गोहो मछलियों की दूकान पर पहुँचा । आधा सेर छोटी छोटी मछलियाँ खरीद कर घर ले आया । अपने छोटे पुत्र को बुलाकर समझाया – ''बेटा, इन मछलियों को हमारे पिछवाड़े में पंक्तियों में इस तरह आधा-आधा गाड़ दो, जिससे उनके मुँह ऊपर दिखाई दें । फिर उन पर उपले ढँक दो । '' बेटे ने पिता के आदेशानुसार करणीय किया ।

दूसरे दिन सुबह अमीर आदमी गोहो के घर पहुँच गया । गोहो उसको पिछवाड़े ले गया और उपलों से ढ़ँकी फ़सल दिखा दी । फिर कहा – ''पौधे तो इनके नीचे हैं । ''उसने एक उपला उठाकर दिखाया । एक मछली यों दिखाई दी कि मानों धरती से उग कर आई हो ।

इसके बाद गोहो ने सारे उपले उठा दिये, मछलियों को देख कर अमीर आदमी का सर चकरा गया । चकित होकर बोला – ''आश्चर्य है ! क्या ही चमत्कार है ! कल बाज़ार में तुम कह रहे थे, तो मुझे विश्वास नहीं हुआ था । अब अपनी आँखों देख रहा हूँ, इस लिए विश्वास करना ही पड़ेगा । वरना कभी न मानता । ''

गोहो ने कहा – ''इन बीजों को उगाना कोई कठिन काम तो है नहीं । मेरे पास अगर दस एकड़ ज़मीन होती तो मैं खुद यह फ़सल पैदा करता । ''

''यह काम मैं ही करूँगा । ''कहते हुए अमीर आदमी घर लौटा । अपने नौकर को बुला कर उसने कहा – ''इस साल हमारे खेत में मछली के सूखे अंडे बिखेर दो । अब तक मैं मानता था कि सूखे अंडे बीज नहीं बन सकते । अब तो प्रत्यक्ष प्रयोग कर लिया है । अंडे ज़रूर उगेंगे । '' नौकर ने आदेशानुसार कर दिया ।

यह समाचार सारे गाँव में फैल गया । जहाँ कहीं अमीर आदमी दिखाई देता, उसे देख कर लोग मुँह छिपाए हँसने लगते । थोड़े ही दिनों में अमीर को असली बात का पता चला । वह भली भाँति समझ गया वह गोहो का मज़ाक उड़ाने चला तो बदले में उसे मुँह की खानी पडी ।

मानव की मदद

किसी ज़माने में मलय तट पर एक अनोखा योद्धा रहा करता था । उसके साहस, पराक्रम और अद्‌भुत् वीरता की कहानियाँ देश-विदेश में प्रसारित हुई थीं ।

एक दिन वह समुद्र के तट पर टहल रहा था । उस वक्त एक महाकाय व्यक्ति समुद्र पर चलता हुआ उसकी ओर आया । उस महाकाय के ज़मीनपर पाँव रखते ही योद्धा ने उसे पुकार कर पूछा, "तुम कौन हो ? समुद्र पार करके इस ओर तुम क्यों आये हो ?"

"मैं महाकाय द्वीप से चला आया हूँ । हमारे राजाने 'अनोखा योद्धा' के पास एक खबर देने के लिये मुझे भेजा है । " महाकाय ने जवाब दिया ।

"वह योद्धा फिलहाल शिकार खेलने गया हुआ है । बताओ, उसे क्या संदेश देना है ? उसके लौटते ही मैं उसे सूचित करूँगा । " योद्धा ने कहा ।

"महारानी के प्रसव का समय निकट आ रहा है । इसके पूर्व उन्हों ने दो पुत्रों को जन्म दिया था, पर प्रसव के तुरन्त बाद ही कोई चोर उन बालकों को उठा ले गये हैं । उन बच्चों का अभी तक कोई पता नहीं चला । इस बार पैदा होनेवाले शिशु की रक्षा करने के लिये महाराज 'अनोखा योद्धा' को बुलाना चाहते हैं । इसके पूर्व जब राजा के पुत्र हुए थे, उस वक्त भी दुर्ग के भीतर व बाहर कड़ी सुरक्षा का प्रबन्ध किया गया था । पर इसके बावजूद भी चोर घुस आये और बच्चों को उठा ले गये । ज़रा भी पता न चला कि वे कौन थे, कहाँ से आये, किस दिशा में गये और बच्चों का क्या हुआ । " महाकाय ने जानकारी देते हुए कहा ।

"अच्छी बात है । उस महान् योद्धा के लौटने पर मैं उसे यह समाचार ज़रूर दूँगा । " अनोखा योद्धा ने आमन्त्रण का स्वीकार किया ।

उससे विदा लेकर महाकाय समुद्र में चला गया ।

२५ वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

दूसरे दिन सबेरे अनोखा योद्धा उसी प्रदेश में टहल रहा था, तब उसे आठ नाटे आदमी दौड़ते खेलते दिखाई दिये । योद्धा ने उन्हें पुकार कर पूछा, "तुम कौन लोग हो ? क्या करते हो ?"

"हम नाटे आदमी हैं । हर कोई एक-एक अलग काम करते हैं । मेरा नाम शिलाराम है । मैं जब लेटता हूँ, तो शिला जैसा बनता हूँ, मुझे कोई हिला नहीं सकता । " नाटे लोगों में से एक ने कहा ।

"देखें, बैठो तो सही । " योद्धा ने कहा । शिलाराम ज़मीनपर लेट गया । योद्धा ने उसे उठाने की लाख कोशिश की, मगर वह उसे ज़रा भी हिला नहीं पाया ! विस्मय में आकर उसने बाकी नाटे लोगों की शक्तियों के बारे में पूछा

एक का नाम था दिव्यकर्णी । वह ममुद्र पार का वार्तालाप भी सुन सकता था । तीसरे का नाम दूरदर्शी था, जो समुद्रपार की छोटी सी चीज़ को भी देख सकता था । चौथा महाज्ञानी था । वह संसार की प्रत्येक दिशा में घटित होने वाले समाचारों का पता कर सकता था । पाँचवा व्यक्ति था लघुहस्ति । वह मुर्गी के नीचे सेंका जानेवाला अण्डा भी उसकी आँख बचाकर हड़प कर सकता था । छटे व्यक्ति का नाम आरोही था, जो ऐसा चिकना था, कि उस पर मच्छर भी नहीं रेंग सकता था । सातवाँ व्यक्ति तीरंदाज़ था । वह पंखोंवाले सौ कीटकों को साथ उड़ते देख उन में से किसी भी विशिष्ट कीटक को अचूक तीर मार सकता था । आठवाँ व्यक्ति था दारुब्रह्मा । उसके हाथ कोई भी लकड़ी देने से वह उससे तरह तरह के दारुशिल्प और क्या क्या चीज़ें बना सकता था ।

"शाबाश ! बताओ, एक जहाज़ बनाने में तुम्हें कितना समय लगेगा ?" योद्धा ने पूछा ।

"जितनी देर में तुम यहाँ एक गोल चक्कर लगा सको । " दारुब्रह्मा ने आत्मविश्वास से कहा ।

"बस ? यह लगायी चक्कर । " कहकर योद्धा ने खड़े जगहपर एक चक्कर लगाया । जब उसकी पीठ समुद्र की ओर घूमी, तब उसी क्षण दारुब्रह्मा ने लकड़ी का एक टुकड़ा समुद्र की ओर फेंका और जब योद्धा समुद्र की ओर घूमा तब तक समुद्र के पानी पर एक जहाज़ डोल रहा था !
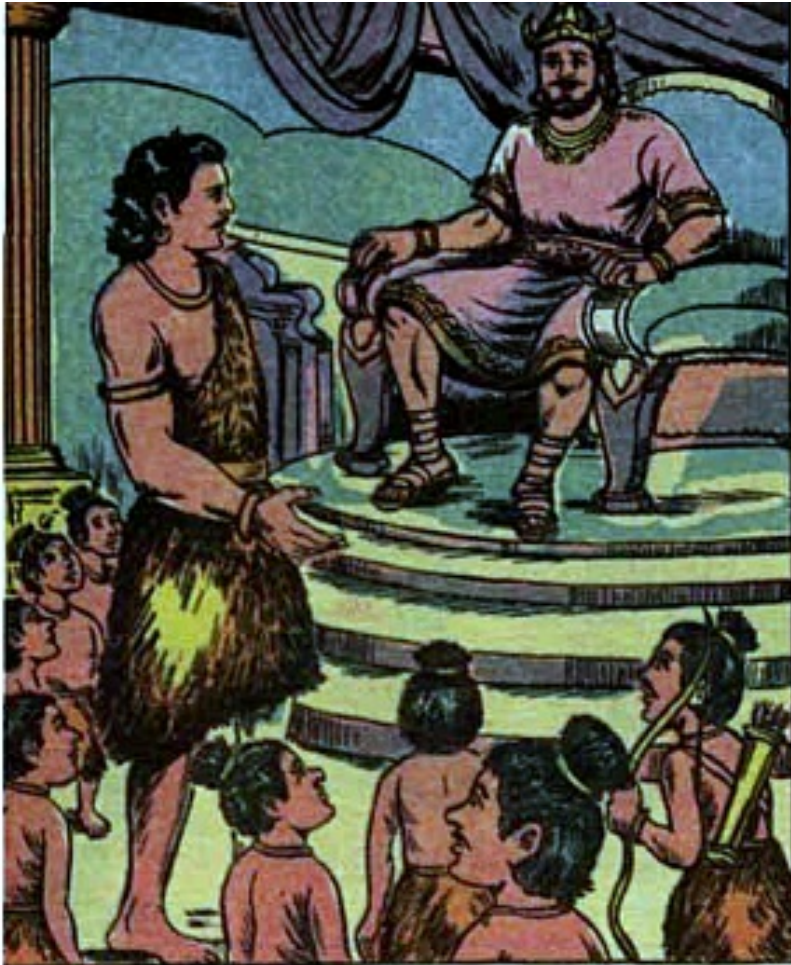
"मैं समुद्रपर महाकायों के द्वीप में जानेवाला हूँ । तुम सब लोग मेरे साथ चलकर मेरी मदद करोगे ?" योद्धा ने नाटे लोगों से पूछा ।

"अवश्य मदद देंगे । पूर्वी देशों के बारे में हमें पूरी जानकारी भी है । " नाटों ने कहा ।

योद्धा आठों को जहाज़ पर सवार करवा कर रवाना हुआ । शीघ्र ही वह महाकायों के देश में पहुँचा । महाकव्यों का राजा 'अनोखा योद्धा' के आगमन पर परम प्रसन्न हुआ और उसका और उसके अनुचरों का अपूर्व स्वागत राजा ने किया । इस के बाद राजा ने योद्धा से कहा, "आप लोग सही वक्त पर आ पहुँचे हैं । आज ही कुछ घंटों पहले रानी ने एक शिशु को जन्म दिया है । इस के पूर्व जो दो बालक जन्मे था, वे दोनों प्रसव के दिन ही रात में चोरी हो गये हैं । इस शिशु के भी आज रात को खतरा है । "

"आप डरियेगा नहीं । मैं और मेरे अनुचर, हम सब मिलकर आज रात को आप के बच्चे की रक्षा करेंगे । अगर हम उसकी रक्षा न कर पायें, तो आप मेरा सिर काट सकते हैं । " योद्धा ने कहा ।

राजमहल में लोहे जैसे एक मज़बूत कमरे में नवजात शिशु को रखा गया, फिर उस में दो दाइयों को छोड़ कर योद्धा और उसके अनुचर शिशु का पहरा देने लगे ।

महाज्ञानी ने योद्धा से कहा, "आप ने यह शर्त रख कर बड़ी भूल की, कि शिशु को हम न बचा पायेंगे, तो आप का सिर काटा जा सकता है । असली बात यह है, कि आज रात को हम इस बालक को बचा नहीं पायेंगे । चोरी तो अवश्य होगी ही । "

"ऐसी बात है ? अच्छा, पर यह तो बताओ कि इस बच्चे को कौन उठा ले जायेगा ?" योद्धा ने पूछा ।

"चोर तो साक्षात् इस राजा की ही बहन है । इसके पूर्व जो बच्चे हुए, उन्हें भी वही उठा ले गयी है । इस भाई-बहन के बीच जानी दुश्मनी है । बहन ने मन्त्र सीखे हैं । अदृश्य रूप में उसने दुर्ग में प्रवेश किया, कमरे के धुआँ-कश में से अन्दर हाथ बढ़ाया और बच्चों को उठा कर ले गयी । " महाज्ञानी ने कहा ।

"यह खबर सुनते ही शिलाराम धुँआ कश के निचले भाग में लेट गया और बोला,

"अगर उसने धुआँ-कश में से हाथ बढ़ाया तो फिर वह अपना हाथ वापस नहीं ले सकेगी । "

इसके बाद सब जन अपने अपने स्थानों पर बैठ गये । अर्द्ध-रात्रि व्यतीत होनेपर दिव्यकर्णी ने चेतावनी दी, "महाकाय महाराज की बहन दुर्ग से सावधान रहने को कह रही है कि इसके पहले चुराये गये बच्चों की देखभाल बड़ी होशियारी से करें । "

"लगता है कि वह अपने मकान के छत से होकर ऊपर आ रही है । उसके मकान के न द्वार हैं और न गवाक्ष ही । उसके दुर्ग की दीवारें काँच जैसी चिकनी हैं । " दूरदर्शी ने कहा ।

थोड़ी देर बाद दिव्यकर्णी बोला, "आ गयी । पहरेदारों की आँखों में धूल झोंककर वह क़िले में घुस आयी है । "

इसके कुछ क्षण बाद ही धुआँ-कश में से होकर एक काला हाथ धीरे धीरे नीचे आने लगा । वह देखते ही शिलाराम ने झट वह हाथ कसकर पकड़ लिया । हाथ छुड़ाने के लिये वह खींचातानी करने लगी; पर कोई फायदा नहीं । आखिर शिलाराम ने उस हाथ को कमरे के अन्दर खींच लिया । इसपर योद्धा, अन्य नाटे लोग और दाइयाँ भी उद्विग्नतापूर्वक उस हाथ को चारों तरफ़ से घेरकर आश्चर्य से देखने लगे । जब सब लोग इस गड़बड़ी में डूबे हुए थे, तब उस राक्षसी बहन ने अपना दूसरा हाथ कमरे के अन्दर बढ़ाया और झूले में रखे बालक को उठाकर ले गयी ।

दाइयों ने झूले की ओर दृष्टि दौड़ाकर चिल्लाना शुरू किया, "ओह ! बच्चा गायब हो गया !"

"हम लोग भाग क्यों जायें । हम तो उस राक्षसी का पीछा करके राजा के तीनों बच्चों को वापस ले आयेंगे । " योद्धा ने कहा ।

इसपर सब लोग दुर्ग के बाहर आये और जहाज़ में रवाना हो रही राक्षसी के निवास वाले तट पर पहुँचे । आरोही ने लघुहस्ति को अपने कधों पर चढ़वा लिया और शीघ्र ही दुर्ग की दीवार पर चढ़ कर उसने लघुहस्ति को दुर्ग के अन्दर उतार दिया । लघुहस्ति ने अंदर से महाकाय राजा के तीनों पुत्रों को एक-एक करके आरोही के हाथ सौंप दिया । बच्चों को लेकर फिर सब जहाज से महाकायों के द्वीप को रवाना

हुए ।

वे सब वहाँ पहुँचे भी नहीं थे इतने में राक्षसी को बच्चों के गायब होने का समाचार मिला । उसे आश्चर्य हुआ कि बच्चों को ले जानेका साहस करनेवाले ये कैसे पराक्रमी लोग हैं ! आज तक ऐसा कभी नहीं हुआ था, आज ये लोग अचानक कहाँ से आ धमके ? मेरी नज़र बचाकर बच्चों को ये लोग कहाँ ले गये ? उसके मन में यों कई विचार आये और वह सोचने लगी अब बच्चों को वापस कैसे के आया जाए । ये लोग जब तक अपनी मंज़िल पर नहीं पहुँचे हैं, तभी तक उनसे बच्चों को छिन ले आना ठीक होगा । उसने यों सोचा और जहाज़ की ओर चलने लगी । और वह जहाज़ का पीछा करने लगी । दूरदर्शी बराबर समाचार देता रहा कि राक्षसी कहाँ तक पहुँची है । राक्षसी अपने अनुचरों के साथ जहाज़ की ओर बढ़ने लगी । जहाज़ तेज़ गति से आगे बढ़ रहा था । राक्षसी ने और तेज़ रफ्तार से चलना शुरू किया । दूरदर्शी अपनी दृष्टि के राक्षसी को निकट आते देख रहा था । उसने अपने साथियों को सावधान किया – "भाइयों, राक्षसी तेज़ी से हमारे काखें की ओर बढ़ रही है । थोड़ी ही देर में वह हमारे पास पहुँच जाएगी । और फिर युद्ध छिड़ जाएगा । हमें उसके लिए तैयार रहना चाहिए ।" तीरदांज ने कहा – "मेरे होते हुए तुम लोग चिन्ता क्यों कर रहे हो । बढ़ने दो उसे आगे । वह यहाँ पहुँचने से पहले ही मेरा बाण उसका खातमा कर चुका होगा । वह कहाँ तक आगे आयी है यह तुम मुझे बताते रहो । बस !" जब वह निशाने तक पहुँची, तभी धनुर्धारी ने बाण चलाकर उसके भाल पर स्थित आँख को छेद डाला । राक्षसी आहत हुई और मरकर समुद्र में गिर पड़ी ।

सबेरा होते ही महाकाय महाराजा प्रसूति गृह में दौड़ आया । अपने तीनों पुत्रों को वहाँ पाकर वह संभ्रम और आश्चर्य में आ गया । राजा ने एक सप्ताह तक इन अतिथियों को अपूर्व दावतें दीं; और इसके बाद भेंट व उपहारों से उन का जहाज़ भर दिया । इतना सब करने के बाद राजाने 'अनोखा योद्धा' व नाटे लोगों को सादर बिदा किया ।

प्रकृति के आश्चर्य

सर्वोच्च जल-प्रपात

वेनिजुला का ३,२९२ फ़ीट ऊँचा एंजल जल-प्रपात विश्व में सर्वोच्च है । सन १९३४ में उसका पता लगाया गया ।

डाल्फिन की 'बातें'

डालफिन मछलियाँ मनुष्य से दस गुना ऊँचे स्वर में 'बातें' कर सकती हैं ।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अगस्त १९८९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

M. Natarajan

Pranlal K. Patel

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जून १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

अप्रैल के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **सीधे को दुत्कार!**

द्वितीय फोटो : **टेढ़ों को सत्कार!!**

प्रेषक : अनुराग, द्वार श्री विजयपाल सिंह, पी.एम.जी.आफिस (सॉर्टिंग) लखनऊ-२२६००१

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीज, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

वैभवपूर्ण टी. वी. धारावाहिक कथा
रामानंद सागर कृत
रामायण
अब चित्र-कथा के रूप में
भारत का महान् महा-काव्य जिसमें सारा ज्ञान,
शक्ती और वैभव भरा पड़ा है ।
दूर-दर्शन की उस विशाल चित्र-कथा की प्रतीक्षा कीजिए ।
हिन्दी और अंग्रेज़ी में । अपनी प्रति सुरक्षित कीजिए ।
एक प्रति का मूल्य ५ रुपये ।
प्रकाशन-पूर्व विशेष मूल्य : १२ संख्याओं के लिए ५० रुपये ।
अपनी चन्दे की रकम मनी-ऑर्डर/पोस्टल ऑर्डर/या बैंक-ड्राफ्ट से निम्नलिखित पते पर भेज दीजिए:
डॉल्टन एजन्सीज, वडपलनी मद्रास-६०० ०२६
चंदामामा-विजया
कंबाइन का प्रकाशन